जीवन का स्रोत जीवन

कृष्णकृपाश्रीमूर्ति श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

द्वारा विरचित वैदिक-ग्रन्थ-रत्न—

श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप
श्रीमद्भागवत (भगवत्-सन्देश) स्कन्ध १-१० (३०-खण्ड)
श्रीचैतन्यचरितामृत (१७ खण्ड)
भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभु का शिक्षामृत
श्री भक्तिरसामृतसिन्धु
श्री उपदेशामृत
श्रीईशोपनिषद्
अन्य लोकों की सुगम यात्रा
श्रीकृष्णभावनामृत : सर्वोत्तम योगपद्धति
लीला पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण (३ खण्ड)
पूर्ण प्रश्न पूर्ण उत्तर
द्वन्द्वात्मक अध्यात्मवाद—पाश्चात्य दर्शन का वैदिक दृष्टिकोण (२ खण्ड)
न्दन भगवान् कपिल का शिक्षामृत
महाराज की भागवत-शिक्षा
रसराज श्रीकृष्ण
जीवन का स्रोत जीवन
योग की पूर्णता
जन्म-मृत्यु से परे
श्रीकृष्ण की ओर
श्रीकृष्ण-भक्ति की अनुपम भेंट
गीतार गान (बंगाली)
राजविद्या
श्रीकृष्णभावनामृत की प्राप्ति
भगवत्-दर्शन पत्रिका (मासिक)

अधिक जानकारी तथा सूचीपत्र के लिए लिखें—

अन्तर्राष्ट्रीय श्रीकृष्णभावनामृत संघ

हरे कृष्ण लैण्ड, गांधी ग्राम रोड, जुहू, बम्बई–४०००४९

जीवन का स्रोत जीवन



कृष्णकृपाश्रीमूर्ति

श्री श्रीमद् ए० सी० भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

संस्थापक-आचार्य श्रीकृष्णभावनामृत संघ, के साथ प्रातःकालीन भ्रमण के समय हुई वार्ताएँ



भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट

बम्बई * न्यूयार्क * लॉस एंजिलस * लंदन * पैरिस

इस ग्रन्थ की विषय-वस्तु के प्रति जिज्ञासु पाठकों से निवेदन है कि वे इस पुस्तक के पृष्ठभाग में उल्लिखित किसी भी निकटस्थ इस्कान केन्द्र के सचिव से, अथवा निम्नलिखित पते पर पत्र-व्यवहार करें :

सचिव
अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ (ISKCON)
हरे कृष्ण धाम, जुहू, बम्बई-400 049

अनुवाद सम्पादक
श्रीनिवास आचार्य दास

प्रथम संस्करण, १९८५: ५,००० प्रतियाँ
द्वितीय संस्करण, १९८६ : ४,००० प्रतियाँ
तृतीय संस्करण जुलाई १९८७, १०,००० प्रतिय
चतुर्थ संस्करण १९८८: १०,०००
पाँचवाँ संस्करण १९८९, १०,००० प्रतिया

printed by
Prabhat Printers,
17 A-Z Industrial Estate,
Lower Parel,
Bombay 400 013.

भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट के लिए श्रील गोपालकृष्ण गोस्वामी भगवत्पाद द्वारा हरे कृष्ण धाम जुहू, बम्बई से प्रकाशित।

विषय-सूची

प्रस्तावना

ऐसे लोगों के लिए जो आधुनिक वैज्ञानिक की प्रत्येक घोषणा को जाँचा हुआ और सिद्ध सत्य स्वीकार कर लेने के आदी हैं, यह पुस्तक नवीन दृष्टिकोण देने वाली होगी। **जीवन का स्रोत जीवन** में विना किसी पूर्व तैयारी के दी हुई वार्ताएँ हैं, परन्तु इनमें आधुनिक विज्ञान व वैज्ञानिकों की कुछ प्रभावी नीतियों, सिद्धांतों तथा मान्यताओं की, शताब्दी के श्रेष्ठ दार्शनिकों व विद्वानों में मूर्धन्य कृष्णकृपाश्रीमूर्ति श्री श्रीमद् ए० सी० भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद द्वारा प्रतिभाशाली विवेचना है। श्रील प्रभुपाद जीवन के स्रोत व उद्देश्य से संबंधित प्रचलित सिद्धांतों के मूल में अवस्थित, छिपी हुई घोर निर्मूल मान्यताओं को विस्तृत विश्लेषण द्वारा ्त कर देते हैं।

इस पुस्तक का आधार टेप की हुई वे प्रातःकालीन भ्रमण के समय की वार्ताएं हैं जो लॉस एंजिल्स क्षेत्र में १९७३ में श्रील प्रभुपाद व उनके शिष्यों में हुई थीं। जब उन प्रातःकालों में उन्होंने विज्ञान पर प्रकाश डाला था, श्रील प्रभुपाद ने मुख्यतः अपने शिष्य थौडम डी० सिंह पी-एच० डी० से बातें की थीं। डॉ० सिंह जीव सम्बन्धी रसायन शास्त्री हैं। भक्तिवेदान्त संस्थान के, जो उन्नत विज्ञान, दर्शन तथा धर्मशास्त्र का अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र है, निदेशक हैं।

प्रतिदिन, संसार में चाहे जहाँ श्रील प्रभुपाद होते, वे ठंढे प्रातःकाल की शान्ति में दूर-दूर तक टहलने जाते थे। वे इस समय गर्म लम्बा कोट पहनते और इस आत्मीय समय को विद्यार्थियों के छोटे समूह, शिष्यों और विशेष अतिथियों के साथ बिताया करते थे। कुछ प्रातःकालों में वे मनन में मग्न रहते अथवा आस-पास के वातावरण के सौन्दर्य का आस्वादन करते और कुछ भी बातचीत न होती। और दूसरे अवसरों पर विभिन्न विषयों पर प्रायः पर्याप्त प्रबलता से काफी देर तक बोलते थे। ऐसी सजीव वार्ताओं के समय वे दिखा देते थे कि दार्शनिक विश्लेषण के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह उबाऊ और दुर्बोध विषय हो,

विषय प्रवेश

विज्ञान : सत्य तथा कल्पना

"आप कैसे जानते हैं कि विज्ञान का अनवरत विकास वैज्ञानिकों को विवश नहीं करेगा ..यह विचार करने के लिए कि शाश्वत ढंग से जीवन ही स्थित रहा है और पदार्थ नहीं ?...आप कैसे जानते हैं कि दस हजार वर्षों में मनुष्य पदार्थ से जीवन का आविर्भाव होना अधिक संभव समझेगा।"

—लुई पास्चर

पुराने समय में (जैसा परीकथाओं में कहा जाता है), हममें से अधिक यह विश्वास करते थे कि हमारा भोजन मूलतः गुणकारी, पौष्टिक, तथा हानिकर रसायनों से मुक्त था। विज्ञापन विश्वसनीय थे, और डब्बों के लेबल सत्यता से उन वस्तुओं के गुण व पदार्थों का वर्णन करते थे, जिन्हें हम ग्रहण करते थे। पुराने समय में अधिकांश संसार हमारे राज्याध्यक्षों, उच्चस्तरीय राजनैतिक अधिकारियों तथा स्थानीय नेताओं की सत्यनिष्ठा पर विश्वास करता था। अतीत समय में हम सोचते थे कि पब्लिक स्कूलों में हमारे बच्चे परिपूर्ण विद्या प्राप्त कर रहे हैं। पुराने समय में हममें से बहुत यह सोचते थे कि आणविक शक्ति का शान्तिकालीन प्रयोग भी है और वह सुखी तथा स्वस्थ समाज के साथ पूर्णतः सुरक्षित व उपयुक्त है।

फिर भी आधुनिक काल में हमारा मोह भंग हो गया है। ग्राहकों के साथ होने वाली धोखाधड़ियों के भण्डाफोड़, उच्चस्तरीय राजनैतिक कलंक तथा विपमुक्त दरख्वास्तों के ढेरों ने हमारी पूर्वनिर्दोषिता को नष्ट कर दिया है। अब हम जानते हैं कि सार्वजनिक प्रचार माध्यमों से अभूतपूर्व विशेषज्ञता के साथ एक मोह व छल का पर्दा खड़ा कर दिया जा सकता है, जिससे वास्तविकता और ढोंग में और यथार्थ तथा भ्रम में विवेचन असंभव हो जाता है।

बहुत दिनों से एक वर्ग के रूप में वैज्ञानिक सुरक्षित रूप में अपने एकान्त कक्षों में बैठे रहे हैं। दुर्भावना से ये सदैव दूर समझे गये। सभी क्षेत्रों में विज्ञान जगत के शोधकर्ताओं तथा चिन्तकों का अन्ततोगत्वा निष्कपट-स्वच्छ समझा गया है। आधुनिक विज्ञान की चमत्कारी उपलब्धियों ने उसे सदैव ही सफल रहने वाले परिधान में सुशोभित कर दिया है। "पैसेन्जर एबाउट अर्थ" में विलियम इर्विन थाम्पसन लिखते हैं, "जिस प्रकार पुराने समय में धर्म की शक्ति के विरुद्ध उसी समय अपील की जा सकती थी जब मनुष्य दण्ड के लिए तैयार रहे, उसी प्रकार अब विज्ञान की शक्ति के विरुद्ध अपील, पागल या अतर्कसंगत होने के आरोप के बिना नहीं की जा सकती। परन्तु शैक्षिक, व्यावसायिक और प्रशासकीय महत्त्वपूर्ण पदों पर स्थित वैज्ञानिकों ने दिखा दिया है कि वे वास्तविक ढंग से शोध कार्यों के साथ अपने व्यक्तिगत विश्वासों और महत्वाकांक्षाओं को मिला देने में सक्षम हैं और इस तरह परिणाम भी बदल जाते हैं।

जब यह हो जाता है तो हमारा व्यवहार सत्यान्वेषण से न होकर असत् विज्ञान तथा इसके परिणामभूत मिथ्यावर्णनों, छल रचनाओं व मिथ्या सूचनाओं के व्यूह से हो जाता है। दुर्भाग्यवश यह अवैज्ञानिक विधि, वैज्ञानिक खोज की सबसे मूलभूत क्षेत्र—जीवन की प्रकृति तथा उद्भव में अपना ली गई। फिर भी जब वैज्ञानिक अप्रमाणित, सिद्ध न हो सकने योग्य जीवन के उद्भव की मनोकल्पनाएँ प्रस्तुत करते हैं, तो लोग अंधश्रद्धा से उन्हें मानने की प्रवृत्ति रखते हैं।

कुछ वैज्ञानिक इस विचारधारा को प्रचारित करते हैं कि मनुष्य केवल अचेतन अणुओं का समूह है। परन्तु वे यह नहीं समझ पाते कि प्रिय लोगों को देखकर अणु किस प्रकार आनन्द का अनुभव तथा किसी की मृत्यु का समाचार सुनकर

क्षोभ का अनुभव करते हैं।

लॉस एंजिल्स के प्राकृतिक इतिहास के संग्रहालय में कई फ्लास्क व बीकर प्रदर्शित किए गए थे। हर एक में मानव शरीर में पाए जाने वाले रासायनिक तत्त्व रखे थे। इसके शीर्षक में समझाया गया था कि यद्यपि ये रसायन मानव शरीर में पाये जाने वाले रसायनों का ठीक भार व अनुपात में प्रतिनिधित्व करते हैं, फिर भी वे न तो जीवन समझे जा सकते हैं न किसी भी मात्रा का वैज्ञानिक अनुमान उनमें जीवन ला सकता है।

जैसा कि **एटॉमिक रिऐक्शन्स** के लेखक मारकेल पोलियानी की टिप्पणी है—

> प्रचलित जीव-विज्ञान का आधार इस मान्यता पर है कि आप जीवन की प्रक्रिया रसायन-शास्त्र व भौतिकी की शब्दावली में समझा सकते हैं और निश्चय ही भौतिकी और रसायन-शास्त्र का अन्ततोगत्वा प्रतिनिधित्व आणविक टुकड़ों के कार्य की शक्ति में है। मनुष्य की धारणा—हमारे भ्रष्टाचार का यही कारण है। हमने या तो उसे जड़ स्वाचालित यन्त्र बना दिया है या प्रवृत्तियों का समूह। यही कारण है कि विज्ञान इतनी सरलता से सर्वसत्ता के पक्ष में, हिंसा के पक्ष में बुला लिया जाता है। खतरनाक भ्रामक सिद्धांतों का सबसे बड़ा स्रोत विज्ञान क्यों बन गया है?

आजकल बहुत से वैज्ञानिक इस सिद्धात का प्रचार कर रहे हैं कि जीवन का मूल पदार्थ है। जनप्रिय पुस्तकें तथा पाठ्य-पुस्तकें मानती हैं कि जीवन क्रमशः कुछ रसायनों से उत्पन्न हुआ, ऐसा आदिकालीन घोल जिसमें एमिनो एसिड, प्रोटीन और दूसरे आवश्यक तत्त्व हैं। जो भी हो विज्ञान इसका कोई प्रमाण नहीं दे सकता, न व्यावहारिक रीति से और न सैद्धांतिक। वास्तव में ये वैज्ञानिक यह मुद्दा अपने विश्वास पर बनाये हैं, यद्यपि सभी प्रकार की वैज्ञानिक आपत्तियाँ हो रही हैं। भौतिकी के विद्वान् ह्यूवर्ट योकी ने सूचना-सिद्धांत द्वारा प्रदर्शित कर दिया है कि एक भी इनफार्मेशनल मोलेक्यूल जैसे साइटोक्रोम [और पेचीदे अंगों वाले अणुओं का क्या कहना] पृथ्वी के अनुमानित जीवनकाल में, संयोग से नहीं पैदा हो सके होंगे। अनिवार्यतः व्यक्ति को निष्कर्ष निकालना होगा, कि प्रमाणित तथा



पहला प्रातःकालीन भ्रमण

१८ अप्रैल, १९७३.

चेवियट हिल पार्क, लॉस ऐंजिल्स

श्रील प्रभुपाद के साथ डॉ० थोडम दामोदर सिंह, कर्णधार दास अधिकारी ब्रह्मानंद स्वामी और अन्य छात्र चल रहे हैं।

अन्य ग्रहों पर जीवन

श्रील प्रभुपाद—सूर्य और चंद्रमा पर भी जीव विद्यमान हैं। वैज्ञानिकों का इस संबंध में क्या मत है ?

डॉ० सिंह—उनका कहना है कि वहाँ जीवन नहीं है।

श्रील प्रभुपाद—वैज्ञानिकों का ऐसा कहना मूर्खतापूर्ण है। वहाँ जीवन विद्यमान है।

डॉ० सिंह—वैज्ञानिक कहते हैं कि चंद्रमा पर जीवन नहीं है क्योंकि उन्हें वहाँ एक भी जीव नहीं मिला।

श्रील प्रभुपाद—वे ऐसा विश्वास ही क्यों करते हैं ? चंद्रमा ग्रह धूल से ढँका हुआ है, किंतु उस धूल में भी जीवधारी रह सकते हैं। जीव के लिए प्रत्येक वातावरण अनुकूल है—कोई भी वातावरण। इसीलिए वेद जीवधारियों को **सर्वगतः** के रूप में वर्णित करते हैं, जिसका अर्थ है यह "सभी परिस्थितियों में अस्तित्व रखने वाला।" जीवधारी पदार्थ नहीं है। यद्यपि वह शरीर रूपी पिंजरे में बंद है, फिर भी वह पदार्थ नहीं है। किंतु जब हम लोग विभिन्न

वातावरणों की बात करते हैं तो हमारा संकेत भौतिक पदार्थों की विविध दशाओं की ओर होता है।

कर्णधार—वे कहते हैं कि चंद्रमा का वातावरण जीव के अस्तित्त्व के लिए प्रतिकूल है, किंतु वे प्रमाणपूर्वक अधिक से अधिक यही कह सकते हैं कि वहाँ का वातावरण जीवन के लिए जैसा वे जानते हैं, अनुकूल नहीं है।

श्रील प्रभुपाद—वेदों का मत है कि जीवात्मा का भौतिक पदार्थों के साथ कोई संबंध नहीं है। जीवात्मा जलाया, काटा, सुखाया या गलाया नहीं जा सकता। भगवद्-गीता में इसकी विवेचना की गई है।

डॉ० सिंह—जीवन के बारे में वैज्ञानिक जो कुछ इस ग्रह पर देखते हैं, अपने उस ज्ञान का वे यह सोचकर विस्तार करते हैं कि दूसरे ग्रहों पर भी यही सिद्धांत लागू होना चाहिए।

प्रभुपाद—हाँ, वे अधिकांश अपने बारे में ही सोचते हैं। वे सीमित मात्रा में अपनी ही परिस्थितियों के बारे में सोचते हैं। इसे हम "मंडूक महोदय का दर्शन" कहते हैं। [हँसी]

एक कुएँ में एक मेंढक रहता था। एक बार उसके किसी मित्र ने जब उसे अटलांटिक महासागर के अस्तित्त्व के बारे में बताया तब उसने अपने मित्र से पूछा, "ओह ! यह अटलांटिक महासागर क्या है ?

उसके मित्र ने उत्तर दिया, "यह पानी का एक बहुत बड़ा भंडार है।"

"कितना बड़ा ? क्या वह इस कुएँ के आकार से दो गुना बड़ा है ?"

"ओह, नहीं। बहुत-बहुत बड़ा।" उसके मित्र ने उत्तर दिया।

"कितना बड़ा ? इससे दस गुना बड़ा ?" इस प्रकार मेंढक अनुमान लगाता चला गया, किंतु इस प्रकार महासागर की विशालता को समझने की क्या संभावना है ? अनुमान लगाने की शक्ति सदा हमारे तथ्य, अनुभव, और हमारी अनुमान लगाने की शक्ति, सीमित होती है। वैज्ञानिकों के अनुमान ऐसे ही मेंढक-दर्शन को बढ़ावा देते हैं।

कर्णधार—उनकी "वैज्ञानिक सत्यनिष्ठा का आधार यह है कि वे लोग केवल उन्हीं वस्तुओं के बारे में बातें करते हैं जिनका वे प्रत्यक्ष अनुभव कर सकते हैं।

श्रील प्रभुपाद—आप अपने अनुभव की बात कर सकते हैं, और मैं अपने अनुभव की। किंतु मैं आपके अनुभव को क्यों स्वीकार करूँ? आप एक मूर्ख हो सकते हैं, तो मैं भी एक मूर्ख क्यों बनूं? आप मेंढक हो सकते हैं, किंतु मान लीजिए मैं व्हेल हूँ। तो मैं आपके कुएँ को सब के रूप में कुछ क्यों स्वीकार करूँ? आपके पास वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त करने की अपनी विधि है और मेरे पास मेरी।

डॉ सिंह—वैज्ञानिक लोग चंद्रमा के धरातल पर एक बूंद पानी का भी पता नहीं लगा सके। इससे उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि वहाँ कोई जीवधारी जीवित नहीं रह सकता।

श्रील प्रभुपाद—उन्होंने चंद्रमा का संपूर्ण धरातल नहीं देखा है। मान लीजिए कोई व्यक्ति किसी अन्य ग्रह से यहाँ धरती पर आता, अरब के रेगिस्तान पर उतरता, व तत्पश्चात अपने घर लौट जाता, तो क्या वह संपूर्ण पृथ्वी की प्रकृति के बारे में पूर्ण निष्कर्ष निकाल सकता था? उसका ज्ञान पूर्ण नहीं होगा।

कर्णधार—उनके पास एक साधन है, जो पानी का पता लगाता है। उनका कहना है कि उन्होंने चंद्रमा के ग्रह-पथ में उस यंत्र का उपयोग किया है, और उसी के आधार पर उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि चंद्रमा पर पानी नहीं है। अतः वहाँ जीवन भी नहीं है।

श्रील प्रभुपाद—यद्यपि सूर्य ग्रह पर प्रत्यक्षतः पानी नहीं है; तथापि वहाँ भी जीवधारी रहते हैं। रेगिस्तान में जल के स्पष्टतः अभाव के उपरान्त नागफनी कैसे उगती है?

कर्णधार—यह (नागफनी) अपने वातावरण से जल ग्रहण करती है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, क्योंकि वातावरण में जीवन को बनाए रखने के लिए अपेक्षित सभी तत्त्व विद्यमान हैं—जैसे पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। किसी भी भौतिक पदार्थ में ये सभी तत्त्व विद्यमान हैं। उदाहरणार्थ, मेरे शरीर में पानी है यद्यपि आप उसे देख नहीं सकते। उसी प्रकार आप मेरे शरीर की अग्नि नहीं देख पाते, फिर भी मेरा शरीर गर्म है। यह [illegible]

आती है ? आपको कोई अग्नि दिखाई नहीं देती । क्या आप मेरे शरीर में प्रज्वलित कोई अग्नि देखते हैं ? तब उष्णता कहाँ से आती है ? इसका उत्तर क्या है ?

अणु में ब्रह्मांड

श्रील प्रभुपाद—सभी पदार्थ कुल पाँच स्थूल तत्त्वों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश) और तीन सूक्ष्म तत्त्वों (मन, बुद्धि और अहंकार) के संयोग हैं ।

कर्णधार—वैदिक विज्ञान के अनुसार भौतिक शक्ति अहंकार से प्रारंभ होती है और बुद्धि के रूप में विकसित होती है, फिर मन और तत्पश्चात् स्थूल तत्त्व-आकाश, वायु, अग्नि आदि । इस प्रकार वही मूल तत्त्व सभी पदार्थों में विद्यमान हैं । क्या यह ठीक है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, भौतिक जगत् का सृजन लघु बीज से उत्पन्न हुए बरगद के पेड़ के विकास की भाँति है । बीज के भीतर वृक्ष को कोई देख नहीं सकता, किंतु आवश्यक बुद्धि सहित वृक्ष के लिए आवश्यक सभी तत्त्व उसमें विद्यमान रहते हैं । वस्तुतः प्रत्येक व्यक्ति का शरीर सामान्यतया सृष्टि का एक लघु रूप है । आपका शरीर और मेरा शरीर दोनों भिन्न-भिन्न ब्रह्मांड हैं, लघु ब्रह्मांड हैं । अतएव सभी आठ भौतिक तत्त्व हमारे शरीर के अंतर्गत विद्यमान हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे वे पूर्ण ब्रह्मांड के अंतर्गत हैं । उसी प्रकार, एक कीट का शरीर एक अन्य ब्रह्मांड है ।

कर्णधार—तब अणु के बारे में क्या कहेंगे ?

श्रील प्रभुपाद—वही सूत्र लागू होता है—ये सब तत्त्व अणु में हैं । **अणोरणीयान् महतो महीयान्** । [कठोपनिषद १.२.२०] इसका अर्थ है कि चाहे कोई वस्तु अत्यंत बड़ी है या अत्यंत छोटी, तथापि उसका निर्माण उन्हीं मूल तत्त्वों से हुआ है । भौतिक जगत् में सर्वत्र यह सत्य पाया जाता है । जिस प्रकार महिलाओं के लिए बनी एक छोटी घड़ी ठीक-ठीक चलने के लिए सभी आवश्यक कलपुर्ज़ों से युक्त रहती है, उसी तरह एक चींटी अपने काम को सुचारु रूप से संपन्न करने के हेतु मस्तिष्क संबंधी सभी आवश्यक गुण रखती है । यह कैसे संभव है ? इसका ठीक प्रकार से उत्तर देने के लिए चींटियों के मस्तिष्क में काम

करने वाले सूक्ष्म ऊतकों (टिस्सुओं) का वारीकी के साथ अध्ययन करना होगा। किंतु आप यह नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त ऐसे अगणित कीटाणु हैं, जो चींटी से भी छोटे हैं। अतः इन सभी की विस्तृत गतिविधियों के लिए कोई न कोई यांत्रिक व्यवस्था होनी चाहिए, किंतु वैज्ञानिक इसकी खोज नहीं कर सकते।

सापेक्षिकता और ज्ञान

श्रील प्रभुपाद—सभी जीवों के पास खाना, सोना, संभोग तथा सुरक्षा इन चार सिद्धांतों को संचालित करने के लिए आवश्यक वुद्धि होती है। यह चार सिद्धांत अणु तक में विद्यमान रहते हैं। मनुष्य में केवल यही भिन्नता है कि उसके पास अतिरिक्त वुद्धि होती है जिससे वह भगवान् को जान सके। यही अंतर है। **आहारनिद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्**। खाना, सोना, संभोग और रक्षा सभी जगह पाये जा सकते हैं। आपने वृक्षों को बढ़ते देखा होगा। जहाँ कहीं गाँठ होती है, पेड़ की छाल और शाखाएँ उस ओर नहीं जातीं, वे दूसरी ओर से वढ़ती हैं। [श्रील प्रभुपाद का भाव यह दिखाने का है कि पेड़ की छाल गाँठ के ऊपर से नहीं, वरन् उसके चारों ओर से घूम कर वढ़ती है] वृक्ष में वुद्धि है। "यदि मैं इस मार्ग से जाता हूँ, तो रोक दिया जाऊँगा। इसलिए मैं उस मार्ग से जाऊँगा।" किंतु वृक्ष की आँखें कहाँ हैं? यह कैसे देख सकता है? उसके पास वुद्धि है। संभव है वह वुद्धि उतनी अच्छी नहीं होगी जितनी कि आपकी है किंतु वह है वुद्धि ही। इसी तरह एक वच्चे में भी वुद्धि होती है, यद्यपि वच्चे की वुद्धि उतनी विकसित नहीं होती जितनी कि उसके पिता की होती है। समय पाकर जब वच्चा वढकर अपने पिता के समान शरीर प्राप्त करता है, तव उसकी वुद्धि भी पूर्ण विकसित हो जाती है।

डॉ० सिंह—तव तो वुद्धि सापेक्ष है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, प्रत्येक वस्तु सापेक्ष है। आपका शरीर है, आपके जीवन की अवधि है और आपकी वुद्धि है और चींटी में अपना शरीर, अवधि तथा वुद्धि है। दोनों, चींटी और हम लोग एक सौ वर्ष जीवित रहने [illegible] हमारे

सौ वर्ष की जीवन-अवधि हमारे शरीर की अनुपाती है। यहाँ तक कि ब्रह्माजी, जो ब्रह्मांड के सर्वाधिक दीर्घायु जीव हैं, भी सौ वर्षों तक जीवित रहते हैं, हमें चींटी की जीवन-अवधि कुछ दिनों की प्रतीत हो सकती है। उसी तरह, दूसरे ग्रहों पर पृथ्वी से भिन्न वातावरण में वहाँ की परिस्थिति के अनुकूल जीवों के प्रकार हैं। किंतु वैज्ञानिक लोग सभी वस्तुओं को पृथ्वी की सापेक्षता में रखकर उसकी परख करते हैं। यह मूर्खता है। वे वैज्ञानिक ऐसा क्यों करते हैं ? यदि संपूर्ण अंतरिक्षीय अभिव्यक्ति सापेक्षता के विधान का अनुसरण करती है, तो वैज्ञानिक यह कैसे कह सकते हैं कि पृथ्वी ग्रह की परिस्थितियाँ अन्य ग्रहों पर भी लागू होनी चाहिए ?

वेद हमें शिक्षा देते हैं कि ज्ञान की कसौटी सदैव देश, काल और पात्र के संदर्भ में होनी चाहिए। देश का अर्थ है "परिस्थितियाँ," काल का अर्थ है "समय" और पात्र का अर्थ है "पदार्थ"। इन तीनों तत्त्वों को ध्यान में रखकर हमें सभी वस्तुओं को समझना चाहिए। उदाहरण के लिए, एक मछली बड़ी सुविधा के साथ पानी में रहती है, और हम समुद्र के किनारे जाड़े के कारण काँप रहे हैं। यह इसलिए है क्योंकि मेरा देश, काल और पात्र मछली के देश, काल और पात्र से भिन्न है। किंतु हम यदि यह निष्कर्ष निकालें कि पनमुर्गियाँ (पानी की एक चिड़िया) भी पानी में काँपने लगेंगी, तो वह मूर्खता पूर्ण निष्कर्ष होगा। उनका देश काल और पात्र पुनः भिन्न है। इस भौतिक जगत् में चौरासी लाख विभिन्न योनियाँ हैं, तथा प्रत्येक योनि को अपनी भिन्न स्थिति से सामंजस्य स्थापित करना होगा। यहाँ तक कि इस ग्रह पर अलास्का में जाकर आप सुविधापूर्वक नहीं रह सकते, यद्यपि वह भी अमेरिका ही है। उसी तरह अलास्का में आनंदपूर्वक रहने वाले जीवधारी यहाँ नहीं आते।

कर्णधार—तब, सापेक्षता हमारी व्यक्तिगत परिस्थिति पर आधारित है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, इसलिए यह कहा गया है कि जो एक के लिए भोजन है, वही दूसरे के हेतु विष है।

ब्रह्मानंद स्वामी—चूँकि वैज्ञानिक चंद्रमा पर जीवित नहीं रह सकते, इसलिए वे

सोचते हैं वहाँ अन्य कोई भी नहीं रह सकता।

८.६ अरब वर्ष-दिन

डॉ० सिंह—संसार की समस्या यह है कि प्रायः प्रत्येक व्यक्ति अपनी ही परिस्थितियों के संदर्भ में सोच रहा है—और यह मूर्खता है।

छात्र—जो व्यक्ति अपने गाँव से कभी भी बाहर नहीं गया, वह सोचता है कि उसका गाँव ही संपूर्ण जगत् है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, मेंढक अपने कुएं से संबंधित बातों के संदर्भ में सोचता है। उसके पास उससे भिन्न सोचने की कोई शक्ति नहीं है। महासागर विशाल है, किन्तु वह मेंढक महासागर की महानता को अपनी स्वयं की महानता की तुलना में रखकर ही सोचता है। उसी प्रकार भगवान् महान् हैं, किन्तु हम लोग भगवान् के बारे में तुलनात्मक दृष्टि से सोचते हैं, हम अपनी ही महत्ता की तुलना में विचार करते हैं। ऐसे कुछ विशेष कीड़े हैं जो रात को जन्म लेते हैं, रात में ही वे बढ़ते हैं और संतान उत्पन्न करते हैं और सूर्योदय के पूर्व ही मर जाते हैं। उन्हें कभी प्रभात के दर्शन नहीं होते ? अतः यदि वे निष्कर्ष निकालें कि प्रातःकाल होता ही नहीं, तो यह मूर्खता है। इसी प्रकार, जैसे ही हमें शास्त्रों से पता चलता है कि ब्रह्माजी के जीवन की अवधि हमारे जीवन के लाखों वर्षों के बराबर होती है, हम उस पर विश्वास नहीं करते। हम कहते हैं, "ऐसा कैसे हो सकता है ?" किन्तु भगवद्गीता [८.१७] कहती है, **सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः** "चार अरब तीस करोड़ पृथ्वी के वर्ष ब्रह्माजी के बारह घंटों के समान हैं। यहां तक कि एक प्रमुख भारतीय राजनीतिज्ञ ने जो गीता के महान् विद्वान् माने जाते थे, इस सूचना को स्वीकार नहीं कर पाये। उन्होंने कहा कि यह एक मानसिक अनुमान है ऐसे दुष्ट होते हुए भी वे एक महत्त्वपूर्ण विद्वान् के रूप में जाने-माने जाते हैं। यही समस्या है। दुष्ट और मूर्ख-विद्वान्, वैज्ञानिक और दार्शनिक माने जाते हैं और इसीलिए संपूर्ण जगत् पथभ्रष्ट किया जा रहा है।

दूसरा प्रातःकालीन भ्रमण

१६ अप्रैल, १६७३

चेवियट हिल्स पार्क लॉस ऐंजिल्स

श्रील प्रभुपाद के साथ डॉ० सिंह, कर्णधार दास अधिकारी, ब्रह्मानंद स्वामी और अन्य छात्रगण हैं

लुप्त डार्विनवाद

प्रभुपाद—यह भौतिक जगत् तीन गुणों का मिश्रण है—सत्त्व, रजोगुण और तमोगुण (अच्छाई, राजसीभाव और अज्ञान) जो कि प्रत्येक स्थान पर कार्य कर रहे हैं। ये तीनों गुण विभिन्न मात्रा में सभी योनियों के जीवधारियों में विद्यमान हैं। उदाहरण के लिए, कुछ वृक्ष अच्छे फल उत्पन्न करते हैं जबकि दूसरे वृक्ष केवल जलाने की लकड़ी मात्र हैं। यह प्रकृति के किसी विशेष गुण के संसर्ग के कारण है। जानवरों में भी तीन गुण विद्यमान हैं। गाय सतोगुण से सम्पन्न है, सिंह रजोगुण युक्त और बंदर तामसी है। डार्विन के कथनानुसार डार्विन के पिता, पूर्वज बंदर हैं। [हँसी] उन्होंने (डार्विन ने) मूर्खतापूर्ण ढंग से विवेचित किया है।

डॉ० सिंह—डार्विन ने कहा है कि अस्तित्त्व कायम रखने के संघर्ष में कुछ योनियों के जीवधारियों का अंत हो गया। जो जीवित रहने के योग्य हैं, रहेंगी और जो जीवित रहने के लायक नहीं हैं, वे लुप्त हो जाएँगे। इसलिए वे (डार्विन) कहते हैं कि जीवित रहना और मरना दोनों समानान्तर चलते हैं।

श्रील प्रभुपाद—कुछ भी लुप्त नहीं हुआ। बन्दर लुप्त नहीं है। डार्विन के निकटतम पुरखे बन्दर अभी भी अस्तित्त्व में हैं।

कर्णधार—डार्विन ने कहा था कि संसार में निश्चय ही प्राकृतिक ढंग से चुनाव करना होगा। किन्तु चुनाव का अर्थ यहाँ इच्छानुसार ग्रहण करना है। अतएव कौन चुन रहा है?

श्रील प्रभुपाद—यह अवश्य ही एक पुरुष होगा। जो कुछ लोगों को जीवित रहने की अनुमति देता है और कुछ को मृत्यु की आज्ञा? ऐसी भेद-भावपूर्ण आज्ञा देने वाला विवेकपूर्ण कोई अधिकारी अवश्य होगा। यह हमारा प्रथम तर्क है। वह अधिकारी कौन है भगवद्गीता में इसकी व्याख्या की गई है। श्रीकृष्ण कहते हैं, **मयाध्यक्षेण प्रकृतिः** अर्थात् "प्रकृति मेरी देख-रेख में काम कर रही है।" [गीता ९.१०]

डॉ० सिंह—डार्विन यह भी कहता है कि विभिन्न योनियाँ एक साथ नहीं रची गईं, वरन् क्रमशः उनका विकास हुआ है।

श्रील प्रभुपाद—तब विकासवाद की प्रक्रिया कैसे प्रारंभ हुई, इस बारे में डार्विन की क्या व्याख्या है?

कर्णधार—डार्विनवाद के आधुनिक प्रवक्ता कहते हैं कि प्रथम जीवधारी रासायनिक क्रियाओं से निर्मित हुआ।

श्रील प्रभुपाद—और मैं उन प्रवक्ताओं से कहता हूँ, "यदि जीवन रासायनिक पदार्थों से उत्पन्न हुआ और आपका विज्ञान इतना उन्नत है, तो आप लोग अपनी प्रयोगशालाओं में रासायनिक क्रियाओं से जीवधारी क्यों नहीं उत्पन्न करते?"

भविष्य में

कर्णधार—उनका (वैज्ञानिकों का) कहना है कि भविष्य में हम जीव पैदा करेंगे।

श्रील प्रभुपाद—भविष्य क्या है? जब भी यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाया जाता है तब वे (वैज्ञानिक) उत्तर देते हैं, "हमलोग इसे भविष्य में करेंगे।" भविष्य में क्यों? यह मूर्खतापूर्ण बात है। "भविष्य चाहे जितना भी सुन्दर हो, उस पर विश्वास मत करो।" यदि वैज्ञानिक इतने [illegible]

प्रदर्शन करना चाहिए कि रसायनों से जीवन कैसे पैदा किया जायगा। अन्यथा उनके विकास का क्या अर्थ है ? वे लोग बकवास कर रहे हैं।

कर्णधार—वे कहते हैं कि हमलोग जीव पैदा करने के बिल्कुल निकट आ पहुँचे हैं।

श्रील प्रभुपाद—वह तो एक ही बात को कहने का भिन्न मार्ग है। "भविष्य में।" वैज्ञानिक इस बात को निश्चित रूप से स्वीकार करें कि जीवन के मूल के संबंध में अभी उनकी जानकारी नहीं है। उनका यह दावा है कि वे लोग शीघ्र ही जीवन के मूल बारे में अपनी रासायनिक क्रिया की प्रामाणिकता सिद्ध करेंगे यह कुछ उस प्रकार की बात है जैसे कोई किसी को "पोस्टडेटेड" (अगामी तिथि) का चेक दे। कल्पना कीजिए कि मैं आपको दस हजार डालर का आगामी-तिथि हेतु अंकित एक चेक दूं, किन्तु यथार्थ में मेरे पास धन नहीं है। उस चेक का क्या मूल्य है। वैज्ञानिक यह दावा कर रहे हैं कि उनका विज्ञान अद्भुत है, किन्तु जब वास्तविक उदाहरण की आवश्यकता होती है तब वे लोग कहते हैं कि भविष्य में हम इसे देंगे। माना कि मैं कहता हूँ कि मेरे पास लाखों डालर हैं और अब आप मुझसे धन माँगते हैं तो मैं कहता हूँ, "ठीक है, मैं आपको अभी एक बड़ा 'पोस्टडेटेड" आगामी-तिथि हेतु अंकित चेक देता हूँ। क्या यह उचित होगा ? यदि आप बुद्धिमान हैं तो आप उत्तर देंगे, "इस समय आप मुझे कम से कम पाँच डालर नकद दें ताकि मैं कुछ तो प्राप्त कर सकूं।" ठीक उसी प्रकार वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशाला में घास की एक पत्ती भी नहीं पैदा कर सकते उस पर भी वे दावा कर रहे हैं कि जीवन रसायनों से निकला है। यह मूर्खता क्या है ? क्या कोई इस संबंध में प्रश्न नहीं पूछता ?

कर्णधार—वे (वैज्ञानिक) कहते हैं कि जीवन रासायनिक विधियों से उत्पन्न हुआ है।

श्रील प्रभुपाद—जैसे ही कहीं कोई विधि या विधान होगा, तत्काल हमें यह सोचना चाहिए कि किसी न किसी ने इसे बनाया होगा। अपने तथाकथित इतने विकास के उपरांत वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशालाओं में घास की एक पत्ती भी नहीं पैदा कर सकते। वे कैसे वैज्ञानिक हैं ?

डॉ० सिंह—उनका (वैज्ञानिकों का) कहना है कि अपनी अंतिम व्याख्या में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि प्रत्येक वस्तु जड़-चेतन पदार्थ से निकली है। जीवित पदार्थ मृत पदार्थ से पैदा हुआ है।

श्रील प्रभुपाद—तो यह जीवित पदार्थ अब कहाँ से आ रहा है? क्या वैज्ञानिक यह कहते हैं कि भूतकाल में जीवन पदार्थ से उत्पन्न हुआ, किन्तु अब वैसा नहीं है? चींटी आज कहाँ से उत्पन्न हो रही है? क्या वह धूल से पैदा होती है?

खोई हुई कड़ी

डॉ० सिंह—वास्तव में बहुत से सिद्धान्त हैं जो व्यक्त करते हैं कि जीवन पदार्थ से उत्पन्न हुआ, निर्जीव से सजीव का आविर्भाव हुआ।

श्रील प्रभुपाद—[डॉ० सिंह को एक भौतिकतावादी वैज्ञानिक के रूप में रख कर उन पर कटाक्ष] ठीक है, वैज्ञानिक जी, आजकल जीवन पदार्थ के भीतर से क्यों नहीं उत्पन्न हो रहा है? दुष्ट! क्यों आजकल जीवन पदार्थ में से नहीं निकलता?

सचमुच ऐसा वैज्ञानिक दुष्ट हैं। ये लोग बचकाने ढंग से कहते हैं कि जीवन पदार्थ से उत्पन्न हुआ है, यद्यपि ये लोग इस बात को सिद्ध करने में बिल्कुल असमर्थ हैं। हमारा श्रीकृष्णभावनामृत आन्दोलन इन सभी दुष्टों की कलई उतार देगा। ये लोग केवल बहका रहे हैं। क्यों नहीं ये लोग तत्काल जीव की उत्पत्ति करते हैं? भूतकाल में ये कहते रहे कि जीवन पदार्थ में से उत्पन्न हुआ। और अब ये कहते हैं कि भविष्य में फिर ऐसा होगा। ये लोग यहाँ तक कहते हैं कि हम पदार्थ से जीव पैदा करेंगे। यह किस प्रकार का सिद्धान्त है। इन्होंने पहले ही घोषित किया कि जीवन का प्रारंभ पदार्थ से हुआ है। बीते हुए समय की ओर इंगित करता है—"प्रारंभ हुआ।" तब ये लोग भविष्य की बातें क्यों करते हैं। क्या यह विरोधी वक्तव्य नहीं है? ये लोग अपेक्षा रखते हैं कि भूतकाल भविष्यत्काल में घटित हो। यह बचपना है, मूर्खतापूर्ण।

कर्णधार—वे (वैज्ञानिक) कहते हैं कि भूतकाल में जीवन पदार्थ ... न्न हुआ

है और इसी प्रकार हम लोग भी भविष्य में जीव की उत्पत्ति करेंगे।

श्रील प्रभुपाद—यह क्या बेहूदगी है? यदि ये लोग वर्तमान काल में यह नहीं सिद्ध कर सकते कि जीवन पदार्थ से उत्पन्न होता है तो इन्हें यह कैसे पता चला कि जीवन भूतकाल में पदार्थ में से उत्पन्न हुआ?

डॉ० सिंह—ये लोग अनुमान लगा रहे हैं...

श्रील प्रभुपाद—प्रत्येक व्यक्ति अनुमान लगा सकता है, परन्तु वह विज्ञान नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति कुछ न कुछ अनुमान लगा सकता है। आप कुछ अनुमान लगा सकते हैं, मैं कुछ अनुमान लगा सकता हूँ। किन्तु उसके लिए प्रमाण चाहिए हम सिद्ध कर सकते हैं कि जीव से ही जीव की उत्पत्ति होती है। उदाहरण के लिए एक पिता बच्चे को जन्म देता है। पिता जीवित व्यक्ति है और पुत्र भी जीवित है। किन्तु ऐसा प्रमाण कहाँ है कि पिता एक मृतक पत्थर है? कहाँ है ऐसा प्रमाण? हम सरलता से सिद्ध कर सकते हैं कि जीव, जीव से ही प्रारंभ होता है। किन्तु इसके संबंध में क्या प्रमाण है कि एक लड़का पत्थर से पैदा हुआ? वे लोग, वैज्ञानिक सचमुच यह सिद्ध नहीं कर सकते कि जीव पदार्थ से उत्पन्न होता है। वे लोग उसे एक तरफ करके भविष्य के लिए छोड़ रहे हैं। [हँसी]

कर्णधार—वैज्ञानिक कहते हैं कि वे अब अम्ल तथा एमिनो एसिड के सूत्र का प्रतिपादन कर सकते हैं। जो एक कोशीय जीव की भाँति होते हैं। वे कहते हैं कि ये अम्ल जीवित प्राणियों से इतनी निकटता से मिलते-जुलते हैं कि ऐसा मालूम होता है कि उनके द्वारा जीवन प्रदान करने से पहले कोई कड़ी खोई हुई है।

श्रील प्रभुपाद—यह बेहूदगी है। मैं उनके (वैज्ञानिकों) सामने ही उन्हें चुनौती दूंगा। [हंसी] उन्हें यह चुनौती नहीं मिली है। छूटी हुई कड़ी उनके मुंह पर दी जाने वाली यह चुनौती।

गधे को नोबुल पुरस्कार

डॉ० सिंह—कुछ वैज्ञानिक इस बात के लिए आशान्वित हैं कि भविष्य में वे

परखनली के भीतर बच्चे पैदा कर सकेंगे।

श्रील प्रभुपाद—परखनली ?

डॉ० सिंह—हाँ, वे लोग पुरुष और नारी के तत्त्वों, वीर्य और रज को जीव विज्ञान की प्रयोगशाला में मिलाने की बात सोच रहे हैं।

श्रील प्रभुपाद—यदि वे जीवात्मा से अपना प्रयोग प्रारम्भ करना चाहते हैं तो परखनली का क्या प्रयोजन है ? यह तो केवल रज और वीर्य को मिलाने का स्थान है, किन्तु वैसा तो गर्भाशय है ही। इसमें वैज्ञानिकों का क्या महत्त्व है ? जबकि यह मिश्रण प्रकृति की परखनली में पहले से ही हो रहा है ?

कर्णधार—यह प्रकृति के द्वारा पहले से ही हो रहा है, किन्तु अब कोई वैज्ञानिक इसे करेगा तो लोग उसे नोबुल पुरस्कार देंगे।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, यह श्रीमद्‌भागवत में कहा गया है—

स्व-विड्-वराहोष्ट्र-खरैः संस्तुतः पुरुषः पशुः।

यह श्लोक संकेत करता है कि जो लोग जानवरों जैसे मनुष्यों की बड़ाई करते हैं, वे आदमी कुत्ते, सुअर, ऊँट और गधों से किसी अर्थ में अच्छे नहीं हैं। "स्व" का अर्थ है "कुक्कुर" "विड्‌वराह" का अर्थ है "विष्टा खाने वाले सुअर" उष्ट्र का अर्थ है "ऊँट" और खर का अर्थ है "गधा"।

यदि नोबुल पुरस्कार किसी दुष्ट वैज्ञानिक को दिया जायगा तो हमें मानना चाहिए कि पुरस्कार देने वाली इस समिति के सदस्य कुत्ते, सुअर, ऊँट और गधे से किसी रूप में बढ़कर नहीं हैं। हम उन्हें मनुष्य नहीं मानते। एक जानवर की सराहना दूसरा जानवर करता है। इसमें क्या बड़प्पन है ? यदि समिति के सदस्य जानवरों से अच्छे, बढ़कर नहीं हैं तो जो व्यक्ति विज्ञान में नोबुल पुरस्कार पाता है वह प्रथम श्रेणी का मूर्ख है, क्योंकि पशु उसकी सराहना करते हैं न कि मनुष्य।

डॉ० सिंह—कुछ वैज्ञानिकों के लिए तो नोबुल पुरस्कार अन्तिम सिद्धि है।

श्रील प्रभुपाद—वे दुष्ट हैं। वे बकवास करते हैं [illegible]

हैं इसलिए दूसरे लोग उस शब्दजाल के कारण छले जाते हैं।

ब्रह्मानंद स्वामी—नोबुल वह व्यक्ति है जिसने बारूद (डॉयनामाइट) का आविष्कार किया था।

श्रील प्रभुपाद—उसने बड़ा दुर्भाग्यपूर्ण कार्य किया। और वह अपना धन और भी दुर्भाग्यपूर्ण कार्य के लिए छोड़ गया। [हँसी]

ब्रह्मानंद स्वामी—गीता कहती है कि असुर संसार के विनाश के हेतु कार्य करते हैं।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, **उग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः** [गीता १६.६]। वे लोग संसार के अशुभ और विनाश के लिए कार्य करते हैं।

जीवित और मृत के बीच अन्तर

[श्रील प्रभुपाद अपनी बेंत की छड़ी से एक सूखे वृक्ष की ओर संकेत करते हैं।]

श्रील प्रभुपाद—पहले इस वृक्ष में पत्तियाँ और टहनियाँ उगती थीं। अब वे नहीं निकलतीं। वैज्ञानिक इसको किस प्रकार समझायेंगे ?

कर्णधार—वे कहेंगे कि वृक्ष का रासायनिक घोल बदल गया है।

श्रील प्रभुपाद—वह सिद्धान्त प्रमाणित करने के लिए वैज्ञानिक उस वृक्ष में उचित रसायन का इंजेक्शन देंगे ताकि फिर से पत्तियाँ और टहनियाँ उगें। वैज्ञानिक विधि में निरीक्षण, सिद्धान्त और उसके उपरान्त प्रदर्शन निहित होते हैं। तब यह पूर्ण माना जाता है। किन्तु वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशाला में सचमुच यह प्रदर्शन नहीं कर सकते कि जीव पदार्थ में से उत्पन्न होता है। वे लोग केवल निरीक्षण करते हैं और फिर बकवास करते हैं। वे बच्चों के समान हैं। अपने बचपन में हमने एक ग्रामोफोन बाक्स देखा था और सोचा था कि कोई बिजली का आदमी उस बक्स में अवश्य होगा। अथवा उसमें किसी प्रकार का कोई भूत बैठा होगा। [हंसी]

डॉ० सिंह—जब हम जीव विज्ञान का अध्ययन करते हैं तब एक प्रमुख प्रश्न हमारे सामने उठता है, "जीवित प्राणी और मृत प्राणी में क्या अंतर है।" पाठ्य पुस्तकें बतलाती हैं कि प्रमुख विशेषता जो दोनों को (जीवित और मृत) अलग करती है, इस प्रकार हैं—जीवित वस्तु स्वयं चल सकती है और वह

दूसरों को जन्म दे सकती है। जबकि मृत पदार्थ न तो बढ़ते हैं न बढ़ता है न दूसरी वस्तु को जन्म दे सकता है। किन्तु विज्ञान की पाठ्यपुस्तकें आत्मा के स्वभाव के बारे में कभी कुछ नहीं कहतीं।

श्रील प्रभुपाद—किन्तु चेतना जीवन की उपस्थिति का प्रारम्भिक लक्षण है। अतः केवल चेतना के कारण एक जीवधारी चलेगा और दूसरों को जन्म देगा। चूँकि एक व्यक्ति जो चेतनामय है, वह ब्याह करने और बच्चे पैदा करने की बात सोचता है। और मूलचेतना वेदों में वर्णित है—तद् ऐक्षत बहु स्याम् [छांदोग्य उपनिषद ६.२.३] इसका अर्थ है—कि भगवान् जो कि चैतन्य-स्वरूप हैं उन्होंने कहा है, "मैं अनेक बन जाऊँगा।" किन्तु बिना चेतना के आनुषंगिक उत्पादन सम्भव नहीं है।

व्यवितगत जीवन का बल

श्रील प्रभुपाद—माली हरे वृक्षों को पानी देते हैं तब वे उस सूखे वृक्ष को हरा बनाने के लिए पानी क्यों नहीं देते ?

डॉ० सिह—अपने अनुभव के आधार पर वे जानते हैं कि वह (सूखा वृक्ष) अब नहीं बढ़ेगा।

श्रील प्रभुपाद—तब वह कौन सा तत्त्व है जिसका अभाव है ? वैज्ञानिक कहते हैं कि रसायन जीव की उत्पत्ति के कारण हैं, किन्तु आज वे सभी रसायन विद्यमान हैं, जो पेड़ के हरे-भरे रहने के समय थे। और ये रसायन अब भी अनेक जीवात्माओं के जीवन का समर्थन कर रहे हैं जैसे कि जीवाणु और कीड़ों की। इसलिए वे यह नहीं कह सकते कि वृक्ष के शरीर में प्राणशक्ति का अभाव है। उसमें प्राणशक्ति है।

डॉ० सिह—किन्तु वृक्ष की अपनी स्वयं की प्राणशक्ति के बारे में आपका क्या कहना है ?

श्रील प्रभुपाद—ठीक है, यही अन्तर है। प्राणशक्ति व्यक्तिगत होती है। और विशेष जीवात्मा जो पहले पेड़ में थी, अब इसमें नहीं है। यही कारण है, क्योंकि सभी आवश्यक रसायन जो जीव के समर्थन के हेतु आवश्यक हैं, वे

अब भी विद्यमान हैं, फिर भी वृक्ष सूख गया है।

यहाँ एक अन्य उदाहरण भी है। मानो कि मैं किसी एक मकान में रह रहा हूँ और फिर उसे छोड़ देता हूँ। मैं चला गया किन्तु अनेक जीवात्माएँ वहाँ रह जातीं हैं—चींटियाँ, मकड़ियाँ और ऐसे ही अन्य जीव। अस्तु, यह कहना सच नहीं है कि चूंकि मैंने वह घर छोड़ दिया है, इसलिए वह अब जीव को नहीं रख सकता है। अन्य जीवात्माएँ अभी भी वहाँ रह रही हैं। इसका सीधा अर्थ यह है कि मैंने व्यक्तिगत एक जीवित इकाई के रूप में उस मकान को छोड़ दिया है। वृक्ष में रसायन घर की भाँति हैं। वे सामान्यतः व्यक्तिगत शक्ति—आत्मा के लिए कार्य करने के हेतु वातावरणस्वरूप हैं। और आत्मा एक व्यक्ति है। मैं भी एक व्यक्ति हूँ, इसलिए मैं घर छोड़ सकता हूँ। इसी प्रकार कीटाणु भी अलग-अलग इकाई हैं उनमें व्यक्तिगत चेतना है। यदि वे किसी एक दिशा में चलते हैं, किन्तु किसी प्रकार रोक दिए जाते हैं, तब वे सोचते हैं "मुझे दूसरे मार्ग से जाने दो।" उनका अपना एक व्यक्तित्व है।

कर्णधार—किन्तु मृत शरीर में कोई व्यक्तित्व नहीं होता।

श्रील प्रभुपाद—इसका संकेत यह है कि व्यक्तिगत आत्मा ने शरीर त्याग दिया है। आत्मा निकल गई है, इसलिए वह वृक्ष अब नहीं बढ़ता।

डॉ० सिंह—श्रील प्रभुपाद जी, जीवित शरीर में, अगणित जीवात्माएँ हैं। किन्तु वह मुख्य जीवन तत्व जो शरीर का स्वामी है वह भी वहाँ रहता है। क्या यह सच है?

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। मेरे शरीर में लाखों जीवात्माएँ विद्यमान हैं। मेरी अंतड़ी में अनेक सूक्ष्म कीट हैं। यदि वे शक्तिशाली बन जायँ तो जो कुछ मैं खाता हूँ, उसे वे खा जायँगे। और उस भोजन से मुझे कोई लाभ नहीं होगा। इसीलिए जिनके पेट में केंचुआ रहते हैं, वे बहुत अधिक खाते हैं, किन्तु उनका शरीर विकसित नहीं होता। वे दुबले-पतले होते हैं और उन्हें बडी भूख लगती है क्योंकि ये जीवात्माएँ उनके भोजन को खा जाती हैं। अस्तु, मेरे शरीर में हजारों-लाखों जीवात्माएँ हैं। वे अलग-अलग अस्तित्व

रखती हैं, और मैं उनसे अलग व्यक्ति हूँ, किन्तु मैं शरीर का स्वामी हूँ सकता हूँ, जिसमें लाखों जीवात्माएँ निवास करती हैं।

छात्र—यदि मैं श्रीकृष्ण का प्रसाद ग्रहण करूँ, [श्रीकृष्ण को अर्पण किया गया भोजन] तो क्या मेरे शरीर में रहने वाली अन्य जीवात्माएँ भी उस प्रसाद को ग्रहण करेंगी ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, तुम बड़े धर्मात्मा हो। [हँसी] तुम श्रीकृष्ण का प्रसाद दूसरों के लिए ग्रहण करते हो।

कर्णधार—परोपकार का कार्य।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, किन्तु तुम्हारे शरीर में उनके खाने के लिए बहुत सी वस्तुएँ हैं, जिनकी तुम्हारे लिए आवश्यकता नहीं है। इसलिए उन्हें खिलाने के हेतु तुम्हें अलग से प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं है।

कम से कम शब्द, अधिक से अधिक समाधान

श्रील प्रभुपाद—व्यष्टि आत्मा का कभी अन्त नहीं होता। वह न तो मरती, न जन्म लेती है। वह केवल एक शरीर से दूसरे में बदल जाती है। यह हमें विज्ञान है।

डॉ० सिंह—किन्तु वैज्ञानिक इसे स्वीकार क्यों नहीं करते ?

श्रील प्रभुपाद—वे लोग [वैज्ञानिक] अच्छे व्यक्ति नहीं हैं। वे दुष्ट हैं। यहाँ तक कि वे लोग सज्जन व्यक्ति भी नहीं हैं। उचित अवसर पर सज्जन व्यक्ति लाज-संकोच रखते हैं। परन्तु ये लोग [वैज्ञानिक] निर्लज्ज हैं। ये हमारी चुनौतियों का ठीक-ठीक उत्तर भी नहीं दे सकते, तिस पर भी ये लोग दावा करते हैं कि हम वैज्ञानिक हैं और जीव की उत्पत्ति करेंगे। ये लोग सज्जन व्यक्ति नहीं हैं। कम से कम मैं इन्हें ऐसा ही मानता हूँ। एक सज्जन व्यक्ति को बकवास करने में लज्जा अनुभव होगी।

डॉ० सिंह—वे लोग [वैज्ञानिक] बोलने से पहले उस पर विचार नहीं करते।

श्रील प्रभुपाद—इसका अर्थ है कि वे लोग मनुष्य नहीं हैं। मनुष्य कुछ भी कहने से पूर्व उसपर दोबारा विचार करता है। श्रीकृष्ण, शरीर में प्राण की

उपस्थिति को समझने में बहुत सरल बना देते हैं। वे कहते हैं—

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तर प्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥

["जैसे शरीर के भीतर आत्मा बचपन से युवावस्था फिर वृद्धावस्था तक निरन्तर प्रगतिशील रहती है उसी प्रकार मृत्यु के पश्चात् वह आत्मा अन्य शरीर में चली जाती है। आत्माज्ञानी धीर पुरुष इस परिवर्तन के कारण मोहित नहीं होते।" [(गीता २.१३)] इन दो पंक्तियों में श्रीकृष्ण जीवशास्त्र संबंधी सारी समस्याएँ सुलझा देते हैं। वही ज्ञान। कम से कम शब्द और अधिक से अधिक समाधान। बड़े-बड़े ग्रन्थों में बकवास का विस्तार करना व्यर्थ है। भौतिकतावादी वैज्ञानिक टर्र-टर्र करते मेंढकों की भाँति हैं कॉं-कॉं-कॉं—[श्रील प्रभुपाद टर्र-टर्र करने वाले मेंढकों की ध्वनि की नकल करते हैं और दूसरे लोग हँसते हैं] मेंढक सोचते हैं, "ओह हमलोग बड़ी अच्छी तरह से बातचीत करते हैं।" किन्तु फल यह निकलता है कि साँप उस मेंढक को पाकर कहता है, "ओह, यह एक उत्तम मेंढक है।" [श्रील प्रभुपाद मेंढक खाते हुए साँप की बोली की नकल उतारते हैं] बप ! खत्म। जब मृत्यु आती है तब सब कुछ खत्म हो जाता है। भौतिकतावादी वैज्ञानिक कॉं-कॉं की रट लगा रहे हैं, किन्तु जब मृत्यु आती है उनकी वैज्ञानिक व्यवसायिकता खत्म हो जाती है और वे कुत्ता बिल्ली अथवा वैसा ही कुछ और बन जाते हैं।

तीसरा प्रातःकालीन भ्रमण

२८ अप्रैल १९७३.
चेवियट हिल्स पार्क, लास ऐंजिल्स

श्रील प्रभुपाद के साथ डॉ० सिंह, कर्णधारदास अधिकारी और अन्य छात्रगण चल रहे हैं।

वैज्ञानिक, चोरों के रूप में

श्रील प्रभुपाद—[हाथ में गुलाव का एक फूल] क्या कोई वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशाला में ऐसा पुष्प वना सकता है ?

डॉ० सिंह—यह संभव नहीं है।

श्रील प्रभुपाद—नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। तनिक देखो श्रीकृष्ण की शक्ति कितने अद्भुत ढंग से काम कर रही है। कोई वैज्ञानिक ऐसा फूल अपनी प्रयोगशाला में नहीं बना सकता। यद्यपि वे बालू के कुछ कण भी नहीं निर्मित कर सकते ? किंतु इतने पर भी उनका दावा है कि वे लोग विश्व में सबसे अधिक उन्नत बुद्धिजीवी हैं। यह उनकी मूर्खता है।

डॉ० सिंह—वे लोग श्रीकृष्ण से ही पदार्थ ग्रहण करते हैं, और दक्षता के साथ उसका उपयोग करते हैं। और फिर यह दावा करते हैं कि उन्होंने कुछ अद्भुत एवं अलौकिक निर्माण किया है।

श्रील प्रभुपाद—कम से कम यदि वे यह स्वीकार करते हैं कि उन्होंने पदार्थ श्रीकृष्ण

से ग्रहण किया है तो यह एक अच्छी बात होती। हम समझते हैं कि सभी वस्तुएँ श्रीकृष्ण से ही आती हैं।

डॉ० सिंह—किंतु वे यह कभी भी स्वीकार नहीं करेंगे कि वे लोग कोई वस्तु श्रीकृष्ण से ग्रहण करते हैं वरन् वे कहते हैं कि हम विधाता हैं।

श्रील प्रभुपाद—उन्होंने कोई वस्तु कैसे बनाई है ? वे बालू में कुछ रसायन मिलाते हैं और उससे शीशा बनाते हैं। किंतु उन्होंने रेत या रसायन नहीं बनाया है। उन्होंने उसको पृथ्वी से ग्रहण किया है। तब उन्होंने क्या कोई वस्तु बनाई है ?

डॉ० सिंह—वे कहते हैं, "हमने सामग्री प्रकृति से ली है।"

श्रील प्रभुपाद—"प्रकृति से" का अर्थ है एक व्यक्ति से। उन्होंने प्रकृति से ग्रहण किया है, किंतु वे लोग चोर हैं क्योंकि प्रकृति में मिलने वाली प्रत्येक वस्तु श्रीकृष्ण की है। **ईशावास्यमिदं सर्वम्**—"प्रत्येक वस्तु भगवान् की बनाई हुई हैं।" [ईशोपनिषद्] भगवद्गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं कि यदि कोई व्यक्ति यज्ञ नहीं करता [त्याग] तो वह चोर है। क्योंकि यज्ञ का अर्थ है श्रीकृष्ण से ली गई वस्तुओं की स्वीकृति। हमें सोचना चाहिए, "श्रीकृष्ण, आपने हमारे निर्वाह के हेतु अनेक-अनेक वस्तुएँ दी हैं।" इतनी स्वीकृति कृष्ण चाहते हैं। यही सब कुछ है। अन्यथा वे आपसे क्या अपेक्षा रख सकते हैं ? उनके सम्मुख आप क्या हैं ? हमें श्रीकृष्ण की कृपाभावना को स्वीकार करना चाहिए। इसलिए भोजन करने के पहले हम अपना भोजन श्रीकृष्ण को अर्पित करते हैं और कहते हैं, "श्रीकृष्ण, आपने यह स्वादिष्ट उत्तम भोजन मुझे दिया है. अस्तु, पहले इसे आप ही चखें।" यह कहने के बाद तब हम उसे खाते हैं।

श्रीकृष्ण भूखे नही हैं, फिर भी वे सम्पूर्ण जगत् को एक ही बार में खा सकते हैं और पुनः इसे पूर्ववत पैदा कर सकते हैं। **पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते** [ईशोपनिषद् प्रार्थना] श्रीकृष्ण पूर्ण हैं इसलिए यदि आप श्रीकृष्ण के भीतर की यह सब शक्ति ग्रहण कर लें फिर भी सारी मूल शक्तियाँ उन्हीं के पास रहेंगी। वे ही पूर्ण शक्ति के आगार हैं।

प्रकृति का मूल

डॉ० सिंह—एक वैज्ञानिक पत्रिका है जिसको "नेचर" कहा जाता है। इसमें प्राकृतिक संपदा जैसे पौधे, फूल और खनिज से संबंधित लेख छपे रहते हैं, किंतु इसमें (पत्रिका में) ईश्वर की चर्चा नहीं रहती।

श्रील प्रभुपाद—हम अच्छी तरह देख सकते हैं कि पौधे प्रकृति के द्वारा ही पैदा किए जाते हैं, किंतु तत्काल एक दूसरा प्रश्न जो हमें पूछना चाहिए वह यह है, "प्रकृति को किसने पैदा किया है?" इसको पूछने में सच्ची बुद्धिमानी है।

डॉ० सिंह—वे लोग इस बारे में प्रायः नहीं सोचते।

श्रील प्रभुपाद—तब तो वे लोग मूर्ख हैं। प्रकृति कहाँ से आती है? ज्योंही हम प्रकृति की बात उठाते हैं, त्योंही दूसरा प्रश्न पूछना चाहिए, "किसकी प्रकृति?" क्या ऐसा नहीं है? उदाहरण के लिए, मैं अपनी प्रकृति के बारे में बात करता हूँ और आप अपनी प्रकृति के बारे में बात करते हैं। अस्तु ज्योंही हम प्रकृति के बारे में बातें करें, दूसरी जाँच शुरू होनी चाहिए, "किसकी प्रकृति?" प्रकृति का अर्थ है शक्ति। और जैसे ही हम शक्ति की बात छेड़ते हैं, हमें तत्काल उस शक्ति के स्रोत के संबंध में पता लगाना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि आप बिजली की शक्ति के संबंध में बातें करते हैं, आपको इसके स्रोत पावर हाउस को अवश्य स्वीकारना चाहिए। आप इसको अस्वीकार कैसे कर सकते हैं? बिजली हम लोगों के पास अपने-आप नहीं चली आती, इसी प्रकार प्रकृति भी अपने आप नहीं काम करती। यह श्रीकृष्ण के अधीन है।

छात्र—वेदों में कहा गया है कि भौतिक शक्ति श्रीकृष्ण के संकेत पर काम करती है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, ज्योंही आप किसी शक्ति के बारे में बात करेंगे तो उसके स्रोत को भी स्वीकार करना होगा।

भौतिक जगत् की मृगतृष्णा

कर्णधार—भूविज्ञानी पृथ्वी के मूल का पता लगाने के हेतु भूमि के धरातल की

परतों-तहों का अध्ययन करते हैं।

श्रील प्रभुपाद—किंतु ये परतें प्रत्येक क्षण बनाई और मिटाई जा रही हैं। अभी वे कुछ हैं और आधे घंटे के बाद कुछ और बन जायेंगी। वे जगत् की भाँति हैं, सदैव परिवर्तनशील। श्रीकृष्ण भगवद्गीता (८.४) में स्वयं कहते हैं—**अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम्**। "भौतिक जगत् अगणित रूपों में परिवर्तनशील है।" इसलिए एक व्यक्ति सारी शक्ति के मूल का पता केवल उसे देखकर ही नहीं लगा सकता। आज पृथ्वी की तहें-परतें काली हैं, इसके बाद वे श्वेत हो सकती हैं, और फिर पुनः काली बन सकती हैं। इसलिए भूविज्ञानी काले रंग का अध्ययन करते हैं, फिर सफेद रंग का और पुनः काले रंग का। इस प्रकार यह चक्र चलता रहता है। यही कहा जाता है—**पुनः पुनश्चर्वित-चर्वणानाम्**। "चवाये हुए को पुनः चबाना। इस समय वातावरण ठंडा है, दोपहर को गर्म हो जाएगा एवं सायंकाल में पुनः ठंडा हो जाएगा। इसी प्रकार संपूर्ण भौतिक ब्रह्मांड संबंधी घोषणा विभिन्न प्रकार के परिवर्तनों पर निर्भर है। यहाँ तक कि हमारे शरीर भी बदल रहे हैं। प्रत्येक वस्तु परिवर्तित हो रही है। किंतु इस सारे परिवर्तन के पीछे शाश्वत अमरता क्या है ? वही यथार्थ ज्ञान का विषय है। वैज्ञानिक उस शाश्वत अमरता का पता नहीं लगा पाते और इसीलिए वे लोग निराश हैं। वे सोचते हैं कि प्रत्येक वस्तु की पृष्ठभूमि खाली और शून्य है। वे सोचते हैं कि अमरता शून्य है। और जब उनसे पूछा जाता है कि यह शून्य कहाँ से आता है, तो वे कहते हैं, "यह कहीं से नहीं आता।" इसलिए हमें उनसे अवश्य पूछना चाहिए "विभिन्नता का पता कैसे चला ?" इस संबंध में वैदिक निष्कर्ष यह है कि विभिन्नता शाश्वत है, यद्यपि परिवर्तित विभिन्नता जिसका अध्ययन वैज्ञानिक लोग भौतिक जगत्में करते हैं, वे अस्थाई हैं। ये विभिन्नता छाया विभिन्नता हैं। वास्तविक विविधता शाश्वत रूप से आध्यात्मिक जगत् में रहती है।

डॉ० सिंह—इसलिए भौतिक जगत् एक मृग-तृष्णा की भाँति है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, माना कि मैं सोचता हूँ कि मरुस्थल में मैं पानी देखता हूँ जहाँ

पानी है ही नहीं। तो यह एक भ्रम है। पानी का अस्तित्त्व है, किंतु वह मृग-तृष्णा में नहीं है। उसी प्रकार भौतिक विभिन्नता जो हम लोग देखते हैं वह भोग विलास की विभिन्नताएँ हैं। ये भी उसी मृग-तृष्णा की भाँति हैं। हम जीवात्माएँ आनंद लेने के लिए बनाये गये हैं, किंतु हम लोग झूठे स्थान पर माया-मोह में आनन्द की खोज कर रहे हैं। हम मरुस्थल के उन पशुओं जैसे हैं जो मृग-तृष्णा में पानी के हेतु इधर-उधर भटकते हैं और संयोगवश प्यास से तड़पकर मर जाते हैं। वे कल्पना के जल से प्यास मुक्त नहीं हो सकते। उसी प्रकार हम लोग अपनी प्यास बुझाने अर्थात् भोग-तृप्ति के लिए अनेक वस्तुओं का निर्माण कर रहे हैं। किंतु हम लोग प्रत्येक मोड़ पर ठगे जाते हैं क्योंकि भौतिक जगत् माया का भ्रमजाल है। इसलिए वास्तविक बुद्धि का अर्थ है इस बात की खोज करना कि "वास्तविकता कहाँ है ? माया मोह के परे सच्चा शाश्वत आनंद कहाँ है ?" यदि हम उसकी खोज कर सकें तो हम सच्चे आनंद का अनुभव करेंगे।

चौथा प्रातःकालीन भ्रमण

२६ अप्रैल, १६७३

लॉस ऐंजिल्स के निकट प्रशान्त महासागर के तट पर

श्रील प्रभुपाद के साथ डॉ० सिंह, ब्रह्मानंद स्वामी, कर्णधार दास अधिकारी और अन्य छात्र चल रहे हैं।

गधों की प्रगति

श्रील प्रभुपाद—इस भौतिक जगत् में प्रत्येक व्यक्ति दुःख भोग रहा है और वैज्ञानिक सुधारों का कोई अर्थ नहीं है। वैज्ञानिक और भी अधिक दुःख की स्थिति निर्मित कर रहे हैं। सारांश यही है। वे लोग सुधार नहीं कर रहे हैं। भक्तिविनोद ठाकुर यह कहकर हमारी बात की पुष्टि करते हैं—**मोह जनमिया, अनित्य संसारे जीव के करये गाधा।** तथाकथित वैज्ञानिक सुधारों के कारण वैज्ञानिक गधे बन गए हैं। और कुछ नहीं वरन् वह अच्छे से अच्छा गधा बनता जा रहा है। मान लो कि गधे की भाँति अथवा कठोर परिश्रम करके एक व्यक्ति ऊँची अट्टालिका बनवाता है। इसके लिए वह जीवन भर परिश्रम का व्रत धारण करता है, किन्तु अन्त में वह अवश्य मरेगा। वह इस संसार में टिक नहीं सकता उसे अपनी ऊँची अट्टालिका में लात मारकर निकाल दिया जायगा, क्योंकि भौतिक जीवन अस्थायी है। वैज्ञानिक लगातार प्रयोग कर रहे हैं और यदि आप उनसे पूछें कि क्या कर रहे हैं? तब वे कहते

हैं, "ओह यह अगली पीढ़ी के लिए, है। भविष्य के लिए परन्तु मैं कहता हूँ, "आपका क्या होगा ?" आप की अटारी का क्या होगा। यदि अपने दूसरे जीवन में आप वृक्ष वनते हैं तो दूसरी पीढ़ी के साथ क्या करेंगे, किन्तु वह एक गधा है। उसे यह नहीं ज्ञात है कि दस हजार वर्ष तक उसे अपनी अट्टालिका के सामने खड़ा रहना पड़ेगा और उसकी अगली पीढ़ी का क्या होगा ? यदि आगामी पीढ़ी के पास पेट्रोल नहीं रहा तो वह क्या करेगी ? यदि वह बिल्ली, कुत्ता या वृक्ष वन गया तो आने वाली पीढ़ी उसकी कैसे सहायता करेगी।

वैज्ञानिक तथा शेष अन्य लोगों को चाहिए कि बार-बार जन्म लेने और मरने से मुक्त होने के लिए प्रयत्न करें। किन्तु मुक्ति के लिए प्रयत्न करने की अपेक्षा प्रत्येक व्यक्ति जन्म और मृत्यु के चक्कर में अधिक से अधिक उलझता जा रहा है। **"भवेऽस्मिन् क्लिश्यमानानामविद्याकामकर्मभिः"** यह श्रीमद्भागवत का उद्धरण है [१.८.३५] यहाँ एक पंक्ति में सारे भौतिक अस्तित्त्व की व्याख्या की गई है। यही साहित्य है। इस एक पंक्ति का अर्थ सहस्रों वर्ष के शोध-कार्य के वरावर है। यह व्याख्या कहती है कि जीवात्मा संसार में कैसे जन्म लेती है। वह कहाँ से आती है, कहाँ जाती है, और उसकी गतिविधियाँ क्या होनी चाहिए और अन्य अनेक आवश्यक बातें। ये शब्द **भवेस्मिन् क्लिश्यमानानाम्** अस्तित्त्व के लिए संघर्ष की ओर संकेत करते हैं। यह संघर्ष क्यों टिकता है ? अविद्या के कारण, अज्ञानवश और उस अज्ञान की प्रकृति कैसी है ? वह **काम-कर्मभिः** है। काम करने के लिए वह विवश है अथवा दूसरे शब्दों में भौतिक आत्मतुष्टि में लीन रहना है।

एक छात्र—अच्छा, क्या यह सच है कि आधुनिक वैज्ञानिक शोध मनुष्य के शरीर की भूख को बढ़ाती है ? क्योंकि वैज्ञानिक अपनी भावनाओं की तृप्ति के लिए काम करते हैं।

श्रील प्रभुपाद—हाँ।

वाग्चातुर्य और विश्व-संकट

श्रील प्रभुपाद—वेदों में कहा गया है, **यस्मिन् विज्ञते सर्वं इवं विज्ञातं भवति**

"यदि एक व्यक्ति को सम्पूर्ण सत्य का ज्ञान हो जाय तो अन्य सभी बातों का ज्ञान यों ही हो जाता है।" मैं पी-एच० डी० नहीं हूँ। क्यों? क्योंकि मैं श्रीकृष्ण—परम-सत्य को जानता हूँ। **यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते।** "यदि कोई व्यक्ति श्रीकृष्णभावनामृत में पूर्णरूप से मग्न है तो दुःख की चरम परिणति में भी वह विचलित नहीं होगा।" [गीता ६.२२] श्रीमद्भागवतम् (१.५.२२) घोषित करते हैं—**अविच्युतोऽर्थः कविभिर्निरूपितो यदुत्तमश्लोकगुणानुवर्णनम्,** "महान् व्यक्तियों ने निश्चयपूर्वक कहा है कि श्रीकृष्णभावनामृत में जीवन की पूर्णता है।" इस प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता है। उसकी तरह नहीं कि हम कुछ शोध करते हैं और एक सिद्धान्त के साथ ऊपर आते हैं और पन्द्रह वर्ष के बाद पुनः कहते हैं—"नहीं, नहीं, यह ठीक नहीं है, यह दूसरी बात है।" इस प्रकार की बकवास करना विज्ञान नहीं है। यह बच्चों का खेल है।

० सिंह—इसी प्रकार शोध द्वारा लोग वस्तुओं का पता लगाते हैं।

श्रील प्रभुपाद—इस प्रकार के शोधकार्य पर खर्च कितना पड़ता है? बस दूसरों से पैसा ऐंठने का यह एक वैज्ञानिक मार्ग है। दूसरे शब्दों में यह ठगी है। वैज्ञानिक प्लूटोनियम, फोटोन्स, हाइड्रोजन, और ऑक्सीजन की भाँति वाग्जाल खड़ा करते हैं। किन्तु इस सबसे जनता का क्या लाभ है जब जनता इस वाग्चातुरी को सुनती है तब वह क्या कहती होगी? एक वैज्ञानिक कुछ हद तक इसको दूसरे को समझाता है। फिर दूसरा दुष्ट आता है और वही अलग-अलग ढंग से दूसरे व्यक्तियों को दूसरे शब्दों में समझाता है और हमेशा दृष्टि वही रहती है। क्या किया गया है? उन्होंने केवल बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिख दी हैं। विकास आजकल पेट्रोल की समस्या है और यह समस्या वैज्ञानिकों की देन है। यदि यह पेट्रोल की पूर्ति लड़खड़ाई तो वैज्ञानिक क्या करेंगे? वे लोग इस बारे में कुछ भी करने में शक्तिहीन हैं।

अरबों डालर धूल की ढेर में

श्रील प्रभुपाद—आजकल भारतवर्ष में पानी की कमी है, किन्तु इस कमी को दूर

करने के हेतु वैज्ञानिक क्या कर रहे हैं ? विश्व में आवश्यकता से बहुत अधिक पानी हैं , तब वैज्ञानिक क्यों नहीं उस अतिरिक्त पानी को अभाव के स्थान पर तत्काल लाते ? उन्हें तत्काल सिंचाई की व्यवस्था करनी चाहिए। परंतु पानी जुटाने के बदले वे चंद्रमा पर जा रहे हैं । क्यों नहीं वे लोग इस धरती ग्रह को सींचते ? इस लोक में समुद्र का पर्याप्त जल है. क्यों नहीं वैज्ञानिक उस पानी से सहारा, अरब के मरुस्थल अथवा राजस्थानी रेगिस्तान को सींचते ? हाँ, वे लोग कहते हैं, "भविष्य में हम प्रयत्न करेंगे ।" घमंड में वे तुरंत कहते हैं, "हाँ, हाँ, हम प्रयत्न कर रहे हैं ।" भगवद्‌गीता में यह कहा गया है कि जब एक व्यक्ति अपनी अनावश्यक इच्छाओं को पूरा करने में लग जाता है, वह अपनी सारी बुद्धि से विरक्त हो जाता है अर्थात् वह बुद्धिहीन बन जाता है **(कामैस्तैस्तैर्हृत ज्ञाना)** ।

यह चंद्रमा ग्रह से संबंधित योजना एक बचकानापन है । जो लोग चंद्रमा पर जाने के लिए दूसरों को उकसाते हैं वे चिल्लाते हुए रोने वाले बच्चों की भाँति हैं । लड़का रोता हुआ कहता है, "माँ, मुझे चंद्रमा दो ।" तब माँ बच्चे को एक दर्पण देती है और उससे कहती है, "मेरे प्यारे बेटे । ले यह है चंद्रमा ।" बच्चा दर्पण ले कर उसमें चंद्रमा को देखकर कहता है, "ओह, चंद्रमा मेरे पास है ।" दुर्भाग्यवश अब यह एक केवल कहानी नहीं रह गई है ।

कर्णधार—चंद्रमा ग्रह की खोज संबंधी योजना पर सारा धन खर्च करने के बाद अंतरिक्ष योजना पर लगे हुए वैज्ञानिक वहाँ से कुछ चट्टाने लाने के अतिरिक्त और कुछ पा नहीं सके । और वे अब इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि कुछ और करने के लिए शेष नहीं है ।

ब्रह्मानंद स्वामी—अब वे लोग किसी "अन्य ग्रहों" पर जाना चाहते हैं, किन्तु उनके पास धनाभाव है । क्योंकि दूसरे ग्रहों पर जाने में करोड़ों और अरबों डालर खर्च होते हैं ।

श्रील प्रभुपाद—लोग बड़ी मेहनत से काम करते हैं और धन अर्जित करते हैं जबकि दुष्ट सरकारें कर लेकर बहुत-सा धन व्यर्थ में ख

प्रति किसी प्रकार की सहानुभूति नहीं दिखाई जानी चाहिए, जब जनता की इतनी गाढ़ी कमाई का धन इस प्रकार मूर्खतापूर्ण कार्यों में व्यय किया जाता है। अब नेता लोग दूसरा धोखा देने जा रहे हैं, "चिंता मत करो। हम दूसरे ग्रह पर जा रहे हैं। हम इस बार वहाँ से और अधिक धूल लायेंगे। हम टनों धूल लायेंगे। ओह, हाँ, इस बार हमारे पास टनों धूल होगी।"

डॉ० सिंह—वैज्ञानिकों का विश्वास है कि मंगलग्रह पर जीवन है।

श्रील प्रभुपाद—वे लोग विश्वास करें या न करें। क्या अंतर पड़ता है? यहाँ इस पृथ्वीग्रह पर जीवन है, किन्तु लोग आपस में लड़ रहे हैं। माना कि मंगलग्रह के ऊपर जीवन है और निस्संदेह वहाँ जीवन है, किन्तु उससे हमें क्या लाभ होगा?

डॉ० सिंह—लोग यह जानने के लिए उत्सुक हैं कि मंगलग्रह पर क्या हो रहा है?

श्रील प्रभुपाद—इसका अर्थ यह हुआ कि उनकी बचकानी जिज्ञासा के कारण लोग अपना विपुल धन अवश्य अपव्यय करें तनिक यह मजाक देखें। जब उन लोगों से कहा है कि अत्यंत दरिद्रता में फँसे हुए किसी देश की सहायता कीजिए तब वे कहते हैं "नहीं, नहीं, हमारे पास धन नहीं है। क्या आप इसे देखते हैं?

सांख्य दर्शन और आधुनिक विज्ञान

डॉ० सिंह—श्रील प्रभुपाद, क्या सांख्य-दर्शन के संबंध में हम लोग कुछ थोड़ा सुन सकेंगे?

श्रील प्रभुपाद—वस्तुतः सांख्य-दर्शन के दो भेद हैं। प्राचीन मूल सांख्य-दर्शन का उपदेश भगवान् श्रीकपिलदेव ने दिया था। और आधुनिक सांख्य-दर्शन का उपदेश अभी थोड़े ही दिन पहले नास्तिक कपिल ने किया है। भगवान् कपिल का सांख्य-दर्शन इस बात की व्याख्या करता है कि मनुष्य किस प्रकार भौतिक पदार्थों से मुक्त हो कर अपने हृदय में भगवान् विष्णु की खोज करे। यह सांख्य वास्तव में भक्ति मार्ग की ही एक प्रक्रिया है। किन्तु आधुनिक

सांख्य दर्शन सामान्यतः भौतिक जगत् की उसके विभिन्न तत्त्वों के परिप्रेक्ष्य में व्याख्या करता है। उस संबंध में यह नया सांख्य-दर्शन वर्तमान वैज्ञानिक शोध के समान है। सांख्य का अर्थ है, "गिनना।" हम लोग भी भौतिक तत्त्वों को गिनते हैं, जैसे यह धरती है, यह पानी है, यह अग्नि है, यह वायु है, यह गगन है और आगे हम अपने मन, अपनी बुद्धि और अहं को गिन सकते हैं। अपने अहं के आगे हम किसी वस्तु की गणना नहीं कर सकते? किन्तु श्रीकृष्ण कहते हैं अहं के अनन्तर भी कुछ शेष रह जाता है और वही प्राणशक्ति है। यही वैज्ञानिक नहीं जानते हैं। वे सोचते हैं कि जीवन केवल भौतिक तत्त्वों का एक मिश्रण है, किन्तु भगवान् श्रीकृष्ण गीता (७.५) में इससे इनकार करते हैं—

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्॥

"इस निम्न स्तर की प्रकृति (भूमि, पानी, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार) के अतिरिक्त मेरी उच्चस्तर की शक्ति है। उसमें सभी जीवात्माएँ निहित हैं, जो भौतिक प्रकृति के विरुद्ध संघर्ष कर रही हैं और जगत् को सहायता पहुँचा रही हैं।

डॉ० सिंह—क्या आधुनिक सांख्य दर्शन में दोनों उच्चस्तरीय और निम्नस्तरीय प्रकृति शक्तियों का अध्ययन किया गया है?

श्रील प्रभुपाद—नहीं, आधुनिक सांख्य-दर्शनशास्त्री उच्चस्तरीय प्रकृति का अध्ययन नहीं करते। साधारणतया वे लोग भौतिक तत्त्वों की ही व्याख्या करते हैं, जैसा कि वैज्ञानिक कर रहे हैं। वैज्ञानिक को यह नहीं ज्ञान है कि यहाँ पर श्रीभगवान् भी हैं। और न तो सांख्य-दर्शन वालों को ही यह ज्ञात है।

डॉ० सिंह—क्या ये लोग रचनात्मक भौतिक तत्त्वों की व्याख्या कर रहे हैं?

श्रील प्रभुपाद—भौतिक तत्त्व रचनात्मक नहीं हैं? केवल आत्मा ही रचनात्मक है। जीव पदार्थ से पैदा नहीं किया जा सकता और पदार्थ अपनी रचना भी स्वयं नहीं कर सकता? आप एक जीवात्मा है, पानी बनाने के लिए हाइड्रोजन

और ऑक्सीजन को आप एक में मिला सकते हैं। किन्तु पदार्थ स्वयं में रचनात्मक शक्ति नहीं रखता। यदि आप एक बोतल हाइड्रोजन एक बोतल ऑक्सीजन के निकट ही एक स्थान पर रख दें तो क्या दोनों (हाइड्रोजन और ऑक्सीजन) बिना आपकी सहायता के आपस में मिल जायेंगे?

डॉ० सिंह—नहीं, उन्हें मिलाना होगा।

श्रील प्रभुपाद—अवश्य, ऑक्सीजन और हाइड्रोजन श्रीकृष्ण की अपरा शक्तियाँ हैं, किन्तु जब जीवात्मा—पराशक्ति उन्हें एक में मिलायेगी तब वे दोनों मिलकर पानी बन सकते हैं।

दूर के कारण और निकट के कारण

श्रील प्रभुपाद—निम्नस्तरीय शक्तियों में तब तक बल नहीं होता जब तक कि उच्चस्तरीय शक्ति उसमें मिल न जाय? यह महासागर (प्रशान्त महासागर की ओर संकेत करके) धीर और गंभीर है। किन्तु जब उच्चस्तरीय शक्ति वायु इसे धक्का देती है यह महासागर बड़ी ऊँची लहरें प्रदर्शित करता है। पवन की उच्च शक्ति के बिना महासागर में इतना बल नहीं है कि वह चलायमान हो। उसी प्रकार पवन से भी उच्चस्तरीय एक दूसरी शक्ति है, उससे अधिक बलशाली और उससे भी बलशाली अर्थात् जब तक हम अंतिम छोर श्रीकृष्ण तक नहीं पहुँचते यह क्रम चलता रहेगा। यही वास्तविक खोज है।

श्रीकृष्ण प्रकृति को नियंत्रित रखते हैं जैसे कि इंजीनियर एक लोकोमोटिव इंजिन को नियंत्रित करता है जो डिब्बे को खींचता है और वह डिब्बा बदले में दूसरे डिब्बे खींचता है, दूसरा किसी तीसरे को खींचता है और तीसरा चौथे को इसी प्रकार सारी गाड़ी चलती है। ऐसे ही निर्माण के क्षेत्र में श्रीकृष्ण पहला धक्का देते हैं, और फिर एक के बाद दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा लगातार यह क्रम चलता है। इसी से यह भौतिक जगत् अस्तित्व में आता है और इसी की व्यवस्था होती है। यह भगवद्गीता (९.१०) में इस प्रकार समझाया गया है—

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम् ।
हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते ॥

"यह भौतिक प्रकृति मेरे नियंत्रण में कार्य कर रही है एवं सभी चर तथा अचर को जन्म दे रही है। और इस हेतु से यह संसार चक्र घूमता है।" चौदहवें अध्याय (१४.४) में श्रीकृष्ण कहते हैं—

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः संभवन्ति याः ।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥

"हे अर्जुन ! नाना प्रकार की योनियों में जितने शरीरधारी प्राणी हैं प्रकृति उन सबकी गर्भधारण करने वाली माता है। और मैं बीज को बोने वाला पिता हूँ।" उदाहरण के लिए यदि हम एक बरगद का बीज बोते हैं स्वभाविक ही है कि उससे एक बड़ा पेड़ उगेगा। और उस बरगद के वृक्ष से लाखों ही वैसे बीज निकलेंगे। इनमें से उत्पन्न प्रत्येक बीज दूसरे वृक्ष को जन्म दे सकता है। उस वृक्ष में से पुनः नये लाखों बीज उत्पन्न होंगे। इस प्रकार यह क्रम चलता जायगा। ऐसे ही श्रीकृष्ण जो मूल रूप से सृष्टि का बीज बोने वाले पिता हैं, वे ही इस दृश्यजगत् की प्रत्येक वस्तु के कारण-स्वरूप हैं।

दुर्भाग्यवश वैज्ञानिक तात्कालिक कारण पर ही ध्यान देते हैं, वे दूरगामी कारण को समझ नहीं सकते। श्रीकृष्ण के संबंध में वेदों में वर्णन आता है **सर्वकारण-कारणम्** अर्थात् सभी कारणों के कारण। यदि एक व्यक्ति सभी कारणों के मूल कारण को समझ ले, तो उसे सभी बातें समझ में आ जायेंगी। **यस्मिन् विज्ञाते सर्वं एवं विज्ञातं भवति** अर्थात् "यदि किसी को मूल कारण ज्ञात हो तो सहायक अन्य कारण उसे स्वतः समझ में आ जायेंगे।" यद्यपि वैज्ञानिक सृष्टि के मूल कारण का अनुसंधान कर रहे हैं, तब पूर्ण ज्ञान स्वरूप वेद इस बात की घोषणा करते हैं कि सृष्टि का मूल कारण भगवान् श्रीकृष्ण हैं। किन्तु वैज्ञानिक इसे स्वीकार नहीं करते। वे अपने आंशिक ज्ञान पर अडिग हैं। यही उनका रोग है।

ब्रह्माण्डीय यंत्र

श्रील प्रभुपाद—वैज्ञानिक यह नहीं जानते कि दो प्रकार की—परा और अपरा—शक्तियाँ हैं। यद्यपि वे लोग इन शक्तियों के साथ प्रतिदिन कार्य करते हैं। भौतिक शक्ति कभी भी स्वतंत्र रूप में कार्य नहीं कर सकती सर्वप्रथम इसे अवश्य आधिभौतिक शक्ति के संपर्क में आना होगा। इसलिए जनता इस संपूर्ण भौतिक जगत् से संबंधित वस्तु की जो मात्र पदार्थ है, कैसे स्वीकार कर सकती है कि वह अपने आप प्रकट हुई है।

एक सब प्रकार से निर्दोष मशीन भी तब तक ठीक ढंग से काम नहीं करती, जब तक कि एक जानदार व्यक्ति उसका बटन न दबा दे। कैडेलॉक एक अच्छी कार है, किन्तु इसमें चालक न हो तो उसका क्या उपयोग होगा? इसी तरह भौतिक जगत् भी एक मशीन है।

लोग अनेक अंगों वाली एक अत्यंत बड़ी मशीन देखकर दंग रह जाते हैं। किन्तु एक बुद्धिमान व्यक्ति जानता है कि कितनी भी अद्भुत मशीन क्यों न हो, वह तब तक चल नहीं सकती, जब तक कि उसका चालक आकर उचित बटन नहीं दबाता। अस्तु, अधिक महत्त्वपूर्ण कौन है? चालक या मशीन? इसलिए हम लोग इस भौतिक मशीन इस भौतिक जगत् के बारे में अधिक चिंतित नहीं हैं, वरन् हमारा चिंतन का विषय है चलाने वाला, श्रीकृष्ण। अब आप लोग यह कह सकते हैं, 'अच्छी बात है आपको यह कैसे ज्ञात है कि इस जगत् का संचालक श्रीकृष्ण हैं?" श्रीकृष्ण कहते हैं—**मय्याध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्** अर्थात् "मेरे आदेशानुसार भौतिक जगत् कार्य कर रहा है।" यदि आप कहें—"नहीं, श्रीकृष्ण इस सृष्टि के संचालक नहीं हैं, तो आपको किसी अन्य संचालक को स्वीकार करना होगा। तब आप उस अपरा सृष्टि-संचालक को उपस्थित करेंगे। किन्तु आप ऐसा नहीं कर सकते। इसलिए अपने प्रमाण के अभाव में आपको मेरे प्रमाण को स्वीकार करना चाहिए।

पाँचवाँ प्रातःकालीन भ्रमण

३ मई, १९७३
लॉस ऐंजिल्स के निकट, प्रशान्त महासागर के तट पर

श्रील प्रभुपाद के साथ हैं डॉ० सिंह और ब्रह्मानंद स्वामी।

अदृश्य कर्णधार

श्रील प्रभुपाद—विश्व का प्रायः प्रत्येक व्यक्ति इस झूठे प्रभाव के अंतर्गत है कि जीवन पदार्थ से उत्पन्न हुआ है। हम लोग इस बुद्धिहीन सिद्धांत को चुनौती दिए बिना ऐसे ही नहीं जाने देंगे। जीवन पदार्थ से नहीं निकलता। जीवन से पदार्थ अनुप्राणित किया जाता है। यह सिद्धांत नहीं तथ्य है। विज्ञान एक गलत सिद्धांत पर आधारित है। इसलिए इसके सभी निष्कर्ष एवं गणना-सूत्र ग़लत हैं। और उसके कारण लोग दुःख उठा रहे हैं। जब इन सभी त्रुटिपूर्ण आधुनिक वैज्ञानिक सिद्धांतों का सुधार होगा, लोग सुखी हो जायेंगे। इसीलिए हमें चाहिए कि वैज्ञानिकों को चुनौती दें और उन्हें पराजित करें अन्यथा ये लोग सम्पूर्ण समाज को गलत रास्ते पर ले जायेंगे। पदार्थ छः चरणों में बदलता है : जन्म, विकास, अनुरक्षण, एक वस्तु से दूसरी वस्तु का निर्माण, क्षय और मृत्यु। किंतु पदार्थ के भीतर का जीवन, आत्मा अमर है। यह ऐसे परिवर्तनों के भीतर से होकर नहीं जाता।

जीवन उन्नत होता हुआ और गिरता हुआ दिखाई पड़ता है, किंतु वह उक्त छहों दशाओं में क्रमशः एक के भीतर से दूसरे के अंतर्गत जाता रहता

है जब तक कि यह भौतिक शरीर रखने के योग्य न रह जाय। तब पुराना शरीर मरता है, और आत्मा नए शरीर में प्रवेश करती है। जब हमारी पोशाक पुरानी और फटी हुई होती है, तब हम लोग उसे बदल देते हैं। इसी तरह एक दिन हमारे शरीर भी पुराने और व्यर्थ हो जाते हैं, और हम आत्मा, नए शरीर में चले जाते हैं।

जैसा कि श्रीकृष्ण भगवद्गीता (२.१३) में कहते हैं—

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति॥

"जैसे जीवात्मा की इस देह में बालकपन, जवानी और वृद्धावस्था होती है, वैसे ही अन्य शरीर की प्राप्ति भी होती है। उस विषय में धीर पुरुष मोहित नहीं होता।" और इससे थोड़ी दूर आगे (२.१८)—**अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः**। इसका अर्थ यह है कि अमर, अनाशवान् जीवात्मा को धारण करने वाला भौतिक शरीर ही नाशवान् है, किन्तु उसके भीतर का प्राण नित्य तथा शाश्वत है।

प्रत्येक वस्तु जीवात्मा के आधार पर ही काम करती है। यह प्रशान्त महासागर है और ये ऊँची लहरें जीवन-शक्ति के द्वारा चालाकी से काम में लाई जा रही हैं। यह वायुयान [श्रील प्रभुपाद एक जाते हुए वायुयान की ओर संकेत करते हैं] उड़ रहा है, किंतु क्या यह अनिर्दिष्ट है?

डॉ० सिंह—कोई इसे निर्देश दे रहा है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, प्रत्येक वस्तु किसी एक के निर्देशन में कार्य कर रही है। दुष्ट वैज्ञानिक इससे इनकार क्यों करते हैं? वायुयान एक बड़ी मशीन है, किंतु यह एक छोटी-सी आध्यात्मिक चिंगारी वायुयान चालक के निर्देश पर उड़ रही है। वैज्ञानिक यह सिद्ध नहीं कर सकते कि बड़ा ७४७ वायुयान छोटी-सी आध्यात्मिक चिंगारी के बिना उड़ सकता है। जिस प्रकार एक छोटी आध्यात्मिक चिंगारी विशाल वायुयान को निर्देश दे सकती है, उसी प्रकार बड़ी आध्यात्मिक चिंगारी संपूर्ण भौतिक जगत् को निर्देशित करती है।

मूल समस्याओं को किनारे रखना

श्रील प्रभुपाद—श्वेताश्वतर उपनिषद् कहता है—

केशाग्र-शत-भागस्य
शतांश सादृशात्मकः ।
जीवः सूक्ष्म-स्वरूपोऽयम्
संख्यातीतो हि चित्कणः ॥

इस श्लोक के अनुसार शरीर के स्वामी आत्मा की माप बाल के अग्रभाग के दस सहस्रांश के समान है। यह बहुत छोटा अणु है। किंतु उस आध्यात्मिक अणुशक्ति के कारण मेरा शरीर काम कर रहा है। वह आध्यात्मिक अणुशक्ति शरीर के अंतर्गत है इसीलिए शरीर काम करता है और वायुयान उड़ता है। क्या यह समझने में अति कठिन है?

कल्पना करो कि कोई व्यक्ति अपने को बहुत पुष्ट और बलवान समझता है। वह पुष्ट और बलवान क्यों है? इसका कारण केवल यही है कि उसके भीतर एक आध्यात्मिक चिंगारी है। जैसे ही वह ज्योतिकण बुझ जायगा वैसे ही उसकी शक्ति और उत्साह लुप्त हो जाएँगे। और गिद्ध जैसे पक्षी आकर उसका शरीर खा जाएँगे। यदि वैज्ञानिक ऐसा कहते हैं कि पदार्थ ही जीव का मूल कारण है तब उनसे कहा जाय कि अच्छा तुम लोग केवल एक मृत मनुष्य के भीतर पुनः जीव ले आओ। एक महान् व्यक्ति प्रो० आइन्सटीन जैसे ही सही। उन वैज्ञानिकों को रसायन के टीके लगाने दें ताकि वे एक मृत व्यक्ति ही पुनः जीवित कर दें और वह लौट कर पुनः काम करने लगे। किंतु ऐसा वे कर नहीं सकते। यहाँ अनेक ऐसी बातें हैं जिन्हें वे जानते ही नहीं, फिर भी वे लोग वैज्ञानिक कहलाते हैं।

डॉ० सिंह—कभी-कभी जब समस्या अत्यंत भयंकर और गंभीर होती है, तो हम लोग उसे हल्के रूप में लेते हैं।

श्रील प्रभुपाद—हाँ जब एक बंदर किसी चीते के विरुद्ध लड़ता है। तब बंदर अपनी आँखें बंद कर लेता है और चीता तत्काल उस पर आक्रमण

है। उसी तरह वैज्ञानिक यदि समस्या का समाधान नहीं कर सकते तो सोचते हैं, "ठीक है, इसे इसी प्रकार चलने दो।" सचमुच वे यही कर रहे हैं, क्योंकि हमारी वास्तविक समस्या है मृत्यु। कोई मरना नहीं चाहता, किंतु वैज्ञानिक मृत्यु को रोक नहीं सकते। वे लोग मृत्यु के संबंध में बड़ी-बड़ी बातें करते हैं क्योंकि वे मृत्यु से कोई बचाव नहीं कर सकते। हम न तो मरना चाहते हैं, न बूढ़ा होना चाहते और न रोग ग्रस्त होना चाहते हैं। किंतु वैज्ञानिक इस दिशा में हमें क्या सहायता दे सकते हैं? वे इस बारे में कुछ नहीं कर सकते। उन्होंने प्रमुख समस्या को अलग रख दिया है।

श्रील प्रभुपाद—बंगाल में एक कहानी प्रचलित है "जंगल का राजा"। वह कहानी एक सियार से संबंधित है जो जंगल का राजा बन गया था। सियार अपनी धूर्तता के लिए विख्यात है। यह सियार एक दिन एक गांव में गया और वहाँ नीले रंग की एक नाद में गिर पड़ा। उसमें से निकल कर वह जंगल में भागा, किंतु वह नीले रंग में रंग उठा था। इसलिए सभी जानवरों ने कहा, "यह कौन है? यह कौन है? यह कौन जानवर है?" यहाँ तक कि सिंह भी आश्चर्यचकित रह गया। "हमने आपको कभी नहीं देखा है, महाशय। अस्तु, आप कौन हैं?" सियार ने उत्तर दिया, "मैं ईश्वर के द्वारा भेजा गया हूँ।" इसलिए वे जंगल के जानवर ईश्वर की भाँति उसकी पूजा करने लगे। किंतु तदन्तर एक रात को कुछ अन्य सियार चिल्लाने लगे। "हुआ, हुआ, हुआ।" और जैसा कि यह नियम है कि सियार, सियारों की बोली सुनकर अपने को रोक नहीं सकते इस रंगे हुए सियार ने भी चिल्लाना प्रारंभ किया, "हुआ, हुआ, हुआ।" और इस प्रकार उसने अन्य पशुओं के समक्ष अपना भेद खोल दिया कि वह रंगा हुआ जानवर सियार के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। ऐसे बहुत से सियार गिरफ्तार किए गए हैं और आपकी सरकार से उन्होंने त्याग-पत्र दे दिये हैं।

ब्रह्मानंद स्वामी—वॉटर गेट का मामला। यह वॉटर गेट घोटाला कहा जाता है।

श्रील प्रभुपाद—सच कहा जाय तो वर्तमान समय में कोई ईमानदार व्यक्ति सरकारी

अधिकारी नहीं बन सकता। यह सर्वत्र सत्य है। जब तक कोई व्यक्ति दुष्ट और बेईमान नहीं है तब तक वह अपने सरकारी पद को कायम नहीं रख सकता। इसलिये कोई भला आदमी सरकार में नहीं जाता, किंतु आप क्या करेंगे ?

डॉ० सिंह—राजनीतिज्ञ सबसे बड़े ठग हैं।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, वे दुर्जन हैं। एक दार्शनिक ने कहा था कि बदमाशों के लिए राजनीति अंतिम शरण है।

विज्ञान को चाहिए कि मृत्यु को रोक दे

ब्रह्मानंद स्वामी—क्या वैज्ञानिक लोग कैन्सर रोग का कारण जानते हैं ?

डॉ० सिंह—उनके पास अनेक सिद्धांत हैं।

श्रील प्रभुपाद—मानो कि आपको कैन्सर रोग होने का कारण ज्ञात है, इससे क्या लाभ है ? यहाँ तक कि यदि कैन्सर रोग को रोक भी दें तो भी आप मनुष्य को सदैव जीवित नहीं रख सकते। यह संभव नहीं है। कैन्सर हो अथवा न हो मनुष्य को मरना है। वह मृत्यु को रोक नहीं सकता। मृत्यु होगी, यदि कैन्सर से नहीं, तो सामान्यतः किसी दुर्घटना से होगी। वैज्ञानिक का वास्तविक लक्ष्य होना चाहिए मृत्यु को रोकना, वही सच्चा विज्ञान है, और वही श्रीकृष्णभावनामृत है। सामान्यतः कुछ रोगों के निदान के हेतु कतिपय औषधियों का पता लगा लेना कोई विजय नहीं है। सच्ची विजय तो यह है कि सभी रोगों को रोक दिया जाय। गीता (८.१६) घोषित करती है कि यथार्थ दुःख तो हैं—जन्म, मृत्यु, वृद्धावस्था और रोग।

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते॥

"उच्चतम लोक से लेकर निम्नतम स्थान तक इस भौतिक जगत् में सभी दुःख के स्थल हैं जहाँ बार-बार जन्म और मृत्यु [illegible] बारंबार जन्म और मृत्यु की समस्या का समाधान है श्रीकृ[illegible]

अभ्यास कर रहे हैं और प्रत्येक व्यक्ति से उसे स्वीकार करने का आग्रह कर रहे हैं। इस अभ्यास का पूर्ण फल यह है कि भक्त को वर्तमान शरीर के नाश होने पर पुनः जन्म, मृत्यु, जरा और रोग युक्त शरीर धारण करने के लिए विवश नहीं किया जा सकता। यही सच्चा विज्ञान है।

छठा प्रात:कालीन भ्रमण

७ मई, १९७३.
लॉस ऐंजिल्स के निकट प्रशान्त महासागर के तट पर।

श्रील प्रभुपाद के साथ हैं डॉ० सिंह, ब्रह्मानंद स्वामी और अन्य छात्रगण।

रहस्यमय शक्ति से रसायन

श्रील प्रभुपाद—वैज्ञानिक कहते हैं कि जीवन रसायन से प्रारंभ होता है। परंतु मूल प्रश्न यह है, "रसायन कहाँ से आया है?" रसायन जीव से उत्पन्न होता है। और इसका अर्थ है कि जीव के पास गूढ़ शक्ति है। उदाहरण के लिए, संतरों के एक पेड़ में अनेक संतरे फलते रहते हैं। और प्रत्येक संतरा रसायनयुक्त होता है—सायटिक अम्ल और ऐसे ही अन्य रसायन उसमें विद्यमान रहते हैं। ये रसायन कहाँ से आए हैं? प्रत्यक्षत: ये रसायन वृक्ष के भीतर रहने वाले उसके प्राणों से उत्पन्न हुए हैं। वैज्ञानिक, रसायन के मूल को नहीं पा रहे हैं। उन्होंने अपनी खोज रसायन से प्रारंभ की है, किन्तु वे लोग इसके मूल की पहचान नहीं कर सकते। महाप्राण श्रीभगवान् के भीतर से रसायन निकलते हैं। जैसे जीवित मनुष्य का शरीर अनेक रसायन उत्पन्न करता है, ठीक उसी प्रकार भगवान् वातावरण में पाये जाने वाले सारे रसायनों का निर्माण करते हैं; जल, थल, मनुष्य के शरीर और पशुओं से रसामन उत्पन्न करते हैं और इसी को रहस्यमय शक्ति कहते हैं।

जब तक कि हम भगवान् की रहस्यमय गूढ़ शक्ति को स्वीकार नहीं कर लेते, तब तक जीव के मूल को जानने की समस्या का समाधान संभव नहीं है।

डॉ० सिंह—वैज्ञानिकों का उत्तर होगा कि हम लोग रहस्यमय किसी शक्ति में विश्वास नहीं कर सकते हैं।

श्रील प्रभुपाद—किन्तु रसायन के मूल के संबंध में उन्हें अवश्य ही व्याख्या करनी पड़ेगी। कोई भी देख सकता है कि एक साधारण-सा वृक्ष भी अनेक रसायनों को जन्म देता है। किंतु वह पेड़ उन रसायनों को कैसे पैदा करता है? चूंकि वैज्ञानिक इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकते अस्तु उन्हें स्वीकार करना होगा कि जीवित प्राणी के पास रहस्यमय शक्ति है। मैं तो यह भी नहीं समझा कि मेरी अंगुली का नाखून अंगुली के बाहर कैसे बढ़ता जाता है? यह सोचना मेरे मस्तिष्क की शक्ति से परे है। दूसरे शब्दों में कहें तो मेरी अंगुली का नाखून अकल्पनीय बल के आधार पर बढ़ रहा है अर्थात् अचिन्त्य शक्ति। यदि एक सामान्य व्यक्ति में अचिन्त्य शक्ति रहती है तब अनुमान लगाओ कि श्रीभगवान् में कितनी अचिन्त्य शक्ति होगी?

श्रीभगवान् और मेरे बीच अंतर यह है कि मैं बहुत थोड़ी मात्रा में रसायन पैदा कर सकता हूँ, जबकि वे विपुल मात्रा में उसका उत्पादन कर सकते हैं, यद्यपि मुझ में भी वही क्षमता है जो श्रीभगवान् में। मैं पसीने के रूप में तनिक सा पानी निकाल सकता हूँ, किन्तु ईश्वर सागरों को जन्म दे सकता है। सागर के एक बूंद पानी की व्याख्या बिना किसी भूल के आपको सागर की गुणवत्ता की ठीक-ठीक परख बता देती है। उसी प्रकार सामान्य जीवधारी श्रीभगवान् का अंश है। इसलिए मनुष्य की व्याख्या करके हम भगवान् को समझने लगेंगे। भगवान् में महान् रहस्यमय सामर्थ्य है। उनकी रहस्यमय शक्ति ठीक बिजली की मशीन की भाँति बड़े वेग से कार्य कर रही है।

बिजली की शक्ति से संचालित कुछ मशीनें ऐसे अच्छे ढंग से बनाई गई हैं कि केवल एक बटन दबा देने भर से सारा कार्य सुचारु रूप से होता है। इसी प्रकार ईश्वर ने कहा, "यहाँ निर्माण होने दो।" और यहाँ निर्माण

हुआ। इस प्रकार सोचने पर प्रकृति के कार्यकलाप को समझना कठिन नहीं है। ईश्वर के पास ऐसी अद्भुत क्षमताएँ हैं कि उसके केवल आदेश मात्र पर निर्माण का कार्य तत्काल संपन्न हो जाता है।

ब्रह्मानंद स्वामी—कतिपय वैज्ञानिक श्रीभगवान् अथवा अचिन्त्य शक्ति को स्वीकार नहीं करते हैं।

श्रील प्रभुपाद—यह उनकी दुष्टता है। ईश्वर है और उसकी अचिन्त्य शक्ति भी विद्यमान है। एक पक्षी में उड़ने की शक्ति कहाँ से आती है? आप और पक्षी दोनों जीवात्माएँ हैं। किन्तु चिड़िया अपनी अचिन्त्य शक्ति के बल पर उड़ सकती है जबकि आप नहीं उड़ सकते। एक अन्य उदाहरण लीजिए—वीर्य रक्त से बनता है। मनुष्य के शरीर में रहस्यमय शक्ति है। चूँकि वह भोग-वासना की ओर झुका हुआ है इसलिए रक्त वीर्य के रूप में बदल जाता है। यह कैसे संभव है जब तक कि इसमें कोई रहस्यमय शक्ति न लगी हो। जीवात्माओं में अनेक गूढ़ रहस्यमय शक्तियाँ हैं। गाय घास खाती है और दूध देती है। प्रत्येक व्यक्ति इसे जानता है, किंतु क्या आप थोड़ी घास खा कर दूध दे सकते हैं? अस्तु गाय में रहस्यमय शक्ति है। जैसे ही गाय घास खाती है वह उसको दूध में बदल सकती है। मूलतः नर और मादा सिद्धांततः एक ही हैं, किंतु एक पुरुष होने के नाते आप भोजन करके दूध नहीं पैदा कर सकते, यद्यपि एक औरत दूध पैदा कर सकती है। ये रहस्यमय शक्तियाँ हैं।

डॉ० सिंह—वैज्ञानिक कहेंगे कि विभिन्न पाचक रस या रसायन विभिन्न प्रकार के जीवधारियों के शरीर में विद्यमान हैं। वे ही रस गाय के पेट में घास को पचाकर दूध उत्पन्न करते हैं।

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। परंतु वह पाचक रस और वह व्यवस्था किसने बनाई है? वह रहस्यमय शक्ति के द्वारा बनी है। आप इन पाचक रसों या उस व्यवस्था को नहीं बना सकते? आप सूखी घास में से अपन[illegible]शाला में दूध नहीं पैदा कर सकते। अपने शरीर में आप रहस्यमय श[illegible] से भोजन को रक्त अथवा ऊतक (टिस्सू) के रूप में बदल[illegible]

अपनी प्रयोगशाला में रहस्यमय शक्ति के बिना आप घास को दूध के रूप में नहीं बदल सकते। अस्तु, आपको रहस्यमय शक्ति के अस्तित्त्व को अवश्य ही स्वीकार करना चाहिए।

रहस्यमय शक्ति का मूल

श्रील प्रभुपाद—विभिन्न रहस्यमय शक्तियों के विकास के साथ मुख्यतः योगियों का संबंध रहता है। एक योगी बिना डूबे पानी पर चल सकता है। गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत उस पर लागू नहीं होता। वह एक रहस्यमय शक्ति है जिसे लघिमा कहते हैं। लघिमा का अर्थ है कि व्यक्ति रुई से भी हल्का बन सकता है और गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत से विपरीत कार्य करने लगता है। योग-विधि सामान्यता अकल्पनीय विकास करती है। योग, साधक के शरीर में पहले ही से विद्यमान रहस्यमय शक्ति का विकास करता है। ये लड़के तैर रहे हैं [तैरते लड़कों की ओर संकेत करते हैं] किन्तु मैं नहीं ... सकता। फिर भी वह तैरने की शक्ति मेरे भीतर प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। मुझे केवल अभ्यास करने की आवश्यकता है। अस्तु, यदि मनुष्य में योगिक शक्ति इतनी अधिक है तब सोचना चाहिए कि श्रीभगवान् में कितनी अधिक योगिक शक्तियाँ होंगी? इसीलिए वेदों में उसे योगेश्वर कहा गया है। इसका अर्थ है, "सभी योगशक्ति का स्वामी" भगवद्‌गीता (१०.८) में श्रीकृष्ण कहते हैं, **अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते**। अर्थात् "मैं ही सारे आध्यात्मिक एवं भौतिक जगत् की उत्पत्ति का कारण हूँ। प्रत्येक वस्तु मुझसे ही उत्पन्न होती है।" जब तक कि हम लोग भगवान् की इस घोषणा को स्वीकार नहीं करते हैं, तब तक भौतिक प्रकृति के मूल के संबंध में कोई निर्णायक व्याख्या नहीं हो सकती। योगिक शक्तियों के अस्तित्त्व की स्वीकृति के बिना ईश्वर को ठीक-ठीक समझा नहीं जा सकता। किन्तु आप श्रीभगवान् को यदि वैज्ञानिक दृष्टि से समझ लेते हैं, तब आप सब कुछ समझ लेंगे।

डॉ० सिंह—तो क्या आपके कहने का तात्पर्य यह है कि विज्ञान किसी मध्य बिंदु

से प्रारंभ होता है, मूल बिंदु से नहीं ?

श्रील प्रभुपाद—ठीक है, बिल्कुल यही बात है। वे लोग (वैज्ञानिक) सृष्टि के मूल स्रोत के संबंध में अज्ञानी हैं। वे एक बिंदु से प्रारंभ करते हैं, किंतु वह बिंदु कहाँ से आया ? एक लंबे अनुसंधान के उपरान्त भी वे लोग यह नहीं जानते। व्यक्ति को यह मानना होगा कि सृष्टि का मूल स्रोत श्रीभगवान् हैं। उनमें सारी योग-शक्तियाँ भरी पड़ी हैं और उन्हीं के भीतर से प्रत्येक वस्तु उत्पन्न होती है। वे स्वयं भगवद्गीता में कहते हैं, **अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।** "मैं सारे आध्यात्मिक और भौतिक जगत् की उत्पत्ति का मूल कारण हूँ। प्रत्येक वस्तु मुझमें से ही निकलती है।" हमारे निष्कर्ष अंधविश्वासों पर टिके हुए नहीं हैं, वरन् वे अत्यंत वैज्ञानिक हैं। पदार्थ जीव से उत्पन्न होता है। जीव के मूल में अगणित भौतिक साधन विद्यमान हैं। यह सृष्टि का महान् रहस्य है।

यदि आप एक सुई को गिरायें वह तुरंत नीचे गिर जायेगी, किंतु कई पौंड भार वाला एक पक्षी वायु में उड़ता है। यदि हम प्रकृति का अध्ययन करें तो हमें ज्ञात होगा कि प्रत्येक जीवात्मा कुछ न कुछ योगिक शक्ति रखती है। मनुष्य पानी में कुछ घंटो से अधिक नहीं रह सकता फिर भी मछली उस पानी में निरंतर पड़ी रहती है। यह योग-शक्ति नहीं है ?

डॉ० सिंह—यह रहस्यमयी शक्ति हमारे लिए है किंतु मछली के लिए नहीं।

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। ऐसा इसलिए है कि योग-शक्तियों का बराबर मात्रा में बँटवारा नहीं किया गया है। किंतु सभी शक्तियाँ श्रीभगवान् में अर्थात् प्रत्येक वस्तु के मूल स्रोत में निवास करती हैं। मैं उनसे कुछ रहस्यमय शक्ति लेता हूँ, आप कुछ और पक्षी कुछ। परंतु योग की शक्तियों का भंडार श्रीभगवान् हैं।

आठ प्रकार की प्रारंभिक योग-शक्तियाँ हैं। इनमें से कुछ हैं—लघिमा [जिसकी सहायता से मनुष्य पंख से भी अधिक हल्का बन जाता है]; म[illegible] [जिसकी सहायता से मनुष्य पहाड़ से भी बड़ा बन जाता है]; प्राप्ति [[illegible] सहायता से मनुष्य जो कुछ भी प्राप्त करना चाहे ले सकता है] और [illegible]

अपनी प्रयोगशाला में रहस्यमय शक्ति के बिना आप घास को दूध के रूप में नहीं बदल सकते। अस्तु, आपको रहस्यमय शक्ति के अस्तित्त्व को अवश्य ही स्वीकार करना चाहिए।

रहस्यमय शक्ति का मूल

श्रील प्रभुपाद—विभिन्न रहस्यमय शक्तियों के विकास के साथ मुख्यतः योगियों का संबंध रहता है। एक योगी बिना डूबे पानी पर चल सकता है। गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत उस पर लागू नहीं होता। वह एक रहस्यमय शक्ति है जिसे लघिमा कहते हैं। लघिमा का अर्थ है कि व्यक्ति रुई से भी हल्का बन सकता है और गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत से विपरीत कार्य करने लगता है। योग-विधि सामान्यता अकल्पनीय विकास करती है। योग, साधक के शरीर में पहले ही से विद्यमान रहस्यमय शक्ति का विकास करता है। ये लड़के तैर रहे हैं [तैरते लड़कों की ओर संकेत करते हैं] किन्तु मैं नहीं तैर सकता। फिर भी वह तैरने की शक्ति मेरे भीतर प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। मुझे केवल अभ्यास करने की आवश्यकता है। अस्तु, यदि मनुष्य में योगिक शक्ति इतनी अधिक है तब सोचना चाहिए कि श्रीभगवान् में कितनी अधिक योगिक शक्तियाँ होंगी? इसीलिए वेदों में उसे योगेश्वर कहा गया है। इसका अर्थ है, "सभी योगशक्ति का स्वामी" भगवद्गीता (१०.८) में श्रीकृष्ण कहते हैं, **अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते**। अर्थात् "मैं ही सारे आध्यात्मिक एवं भौतिक जगत् की उत्पत्ति का कारण हूँ। प्रत्येक वस्तु मुझसे ही उत्पन्न होती है।" जब तक कि हम लोग भगवान् की इस घोषणा को स्वीकार नहीं करते हैं, तब तक भौतिक प्रकृति के मूल के संबंध में कोई निर्णायक व्याख्या नहीं हो सकती। योगिक शक्तियों के अस्तित्त्व की स्वीकृति के बिना ईश्वर को ठीक-ठीक समझा नहीं जा सकता। किन्तु आप श्रीभगवान् को यदि वैज्ञानिक दृष्टि से समझ लेते हैं, तब आप सब कुछ समझ लेंगे।

डॉ० सिंह—तो क्या आपके कहने का तात्पर्य यह है कि विज्ञान किसी मध्य बिंदु

से प्रारंभ होता है, मूल बिंदु से नहीं ?

श्रील प्रभुपाद—ठीक है, बिल्कुल यही बात है। वे लोग (वैज्ञानिक) सृष्टि के मूल स्रोत के संबंध में अज्ञानी हैं। वे एक बिंदु से प्रारंभ करते हैं, किंतु वह बिंदु कहाँ से आया ? एक लंबे अनुसंधान के उपरान्त भी वे लोग यह नहीं जानते। व्यक्ति को यह मानना होगा कि सृष्टि का मूल स्रोत श्रीभगवान् हैं। उनमें सारी योग-शक्तियाँ भरी पड़ी हैं और उन्हीं के भीतर से प्रत्येक वस्तु उत्पन्न होती है। वे स्वयं भगवद्गीता में कहते हैं, **अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते**। "मैं सारे आध्यात्मिक और भौतिक जगत् की उत्पत्ति का मूल कारण हूँ। प्रत्येक वस्तु मुझमें से ही निकलती है।" हमारे निष्कर्ष अंधविश्वासों पर टिके हुए नहीं हैं, वरन् वे अत्यंत वैज्ञानिक हैं। पदार्थ जीव से उत्पन्न होता है। जीव के मूल में अगणित भौतिक साधन विद्यमान हैं। यह सृष्टि का महान् रहस्य है।

यदि आप एक सुई को गिरायें वह तुरंत नीचे गिर जायेगी, किंतु कई पौंड भार वाला एक पक्षी वायु में उड़ता है। यदि हम प्रकृति का अध्ययन करें तो हमें ज्ञात होगा कि प्रत्येक जीवात्मा कुछ न कुछ योगिक शक्ति रखती है। मनुष्य पानी में कुछ घंटो से अधिक नहीं रह सकता फिर भी मछली उस पानी में निरंतर पड़ी रहती है। यह योग-शक्ति नहीं है ?

डॉ० सिंह—यह रहस्यमयी शक्ति हमारे लिए है किंतु मछली के लिए नहीं।

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। ऐसा इसलिए है कि योग-शक्तियों का बराबर मात्रा में बँटवारा नहीं किया गया है। किंतु सभी शक्तियाँ श्रीभगवान् में अर्थात् प्रत्येक वस्तु के मूल स्रोत में निवास करती हैं। मैं उनसे कुछ रहस्यमय शक्ति लेता हूँ, आप कुछ और पक्षी कुछ। परंतु योग की शक्तियों का भंडार श्रीभगवान् हैं।

आठ प्रकार की प्रारंभिक योग-शक्तियाँ हैं। इनमें से कुछ हैं—लघिमा [जिसकी सहायता से मनुष्य पंख से भी अधिक हल्का बन जाता है], महिमा [जिसकी सहायता से मनुष्य पहाड़ से भी बड़ा बन जाता है]; प्राप्ति [जिसकी सहायता से मनुष्य जो कुछ भी प्राप्त करना चाहे ले सकता है] और ईशित्व

[जिसके द्वारा आदमी पूर्ण विजयी एवं प्रभावी बन जाता है और दूसरों को नियंत्रण में रखता है]। अन्य प्रकार की योगिक शक्ति सूर्य में देखी जा सकती है क्योंकि सूर्य की किरणों से अगणित वस्तुएं अप्रत्यक्षतः पैदा की जाती हैं। वैज्ञानिक जब तक योग-शक्ति के अस्तित्त्व को स्वीकार नहीं करते, तब तक वे इस दृष्टि की व्याख्या नहीं कर सकते। वे लोग सामान्यतया व्यर्थ में लक्ष्य को छोड़कर भटक रहे हैं।

डॉ० सिंह—एक चतुर वैज्ञानिक अपने दृष्टिकोण को बिना सिद्ध किए हुए चाहे जो भी कहे, उसका कोई अर्थ नहीं है। वास्तविक वैज्ञानिक को सृष्टि के मूल कारण और अंतिम व्याख्या तक अर्थात् अपने चरम लक्ष्य तक पहुँचना होगा।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, जब तक वह अंतिम स्रोत का पता नहीं लगा लेता तब तक यह कहना पड़ेगा कि विज्ञान का वास्तविक अभ्यास वह नहीं कर रहा है।

डॉ० सिंह—क्या योग के गूढ़ तत्त्व रहस्यवाद को समझने का अर्थ होगा कि हम प्रतिदिन मरने वाले शरीर के संबंध में सच्ची जानकारी भी रखते हैं?

श्रील प्रभुपाद—हाँ।

डॉ० सिंह—किन्तु सामान्य व्यक्ति यह नहीं सोचता कि वह मर रहा है।

श्रील प्रभुपाद—वह तो अज्ञान का कारण है। प्रत्येक क्षण वह मर रहा है। किंतु वह सोचता है, "मैं सदैव जीवित रहूँगा।" सच तो यह है कि मृत्यु का प्रारंभ जन्म के तत्काल बाद प्रारंभ हो जाता है। इस समस्या के समाधान के लिए हमारी व्याख्या यह है कि चूँकि मनुष्य मर रहे हैं, हमारा कर्तव्य है कि उनकी मृत्यु को रोकें। किंतु तथाकथित वैज्ञानिक न कि मृत्यु की प्रक्रिया को और तेज बना रहे हैं, वरन् अपनी भूल को सुधारने के लिए ठोस रचनात्मक सुझाव ग्रहण करने से भी इनकार कर रहे हैं।

सातवाँ प्रातःकालीन भ्रमण

८ मई, १९७३.

लॉस ऐंजिल्स के निकट, प्रशान्त महासागर के तट पर।

श्रील प्रभुपाद के साथ डॉ० सिंह और अन्य छात्रगण हैं।

ठग और ठगे गए लोग

श्रील प्रभुपाद—स्वाभाविक वृत्ति जैसे गुरुत्वाकर्षण या भारहीनता, अथवा अचिन्त्य शक्ति, अकल्पनीय शक्तियाँ और वास्तविक विज्ञान का तात्पर्य है इस अचिन्त्य शक्ति को समझना। किसी एक बिंदु से घटनाओं की लड़ी को एक ही समय में अवलोकन करना अवैज्ञानिक है और इससे अपूर्ण ज्ञान प्राप्त होगा कि इस प्रकृति का मूल अचिन्त्य शक्ति है। उदाहरणार्थ बुद्धिबल से तूलिका और रंग के सहारे हम एक फूल का चित्र उरेह सकते हैं। किंतु हम लोग यह कल्पना नहीं लगा सकते कि संपूर्ण पृथ्वी पर स्वतः पौधे कैसे उगते हैं और फल किस प्रकार लगते हैं। हम रंग के आधार पर चित्रित फूल को समझा सकते हैं, किंतु वास्तविक फूल की व्याख्या हम नहीं कर सकते। वैज्ञानिक मूलतः जैविक वृद्धि को समझा नहीं सकते। वे लोग सामान्यतः वाग्चातुर्य दिखलाते हैं। जैसे अणु (Molecule) और गुणसूत्र (Chromosome) आदि, किंतु वे लोग प्रवृत्ति को नहीं समझा सकते।

तथाकथित वैज्ञानिक की अनिवार्य भूल तो यह है कि अपने निष्कर्ष तक पहुँचने की दिशा में उन्होंने आगमनात्मक प्रक्रिया अपनाई है। उदाहरण के

लिए, यदि एक वैज्ञानिक आगमनात्मक प्रक्रिया से यह निश्चय करना चाहता है कि मनुष्य मर्त्य है अथवा मर्त्य नहीं है तो उसे सारे मानव मात्र का अध्ययन करना होगा और इस बात का पता लगाना होगा कि यदि कुछ लोग या उसमें एक भी नर अमर है। वैज्ञानिक कहता है, "मैं इस मान्यता को स्वीकार नहीं कर सकता हूँ कि सभी मनुष्य मर्त्य हैं। ऐसे भी कुछ लोग हो सकते हैं जो अमर हों। मैंने अभी तक सारे मनुष्यों को नहीं देखा है। अस्तु, मैं यह कैसे स्वीकार कर सकता हूँ कि मनुष्य मरणशील हैं।" यही आगमनात्मक प्रक्रिया कही जाती है और निगमनात्मक प्रक्रिया का अर्थ है कि आपके पिता, शिक्षक अथवा गुरु कहते हैं कि मनुष्य मर्त्य है और आप उसे मान लेते हैं कि, हाँ मनुष्य मर्त्य है।

डॉ० सिंह—तब तो ज्ञान प्राप्त करने के लिए एक आरोहण प्रक्रिया है और दूसरी अवरोहण प्रक्रिया ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, आरोहण प्रक्रिया कभी भी सफल नहीं होगी क्योंकि इसका आधार है इन्द्रिय-ज्ञान के द्वारा एकत्रित जानकारी और इन्द्रिय-ज्ञान अपूर्ण हैं। इसीलिए हम लोग अवरोहण प्रक्रिया को स्वीकार करते हैं।

ईश्वर आरोहण प्रक्रिया के द्वारा नहीं जाना जा सकता इसीलिए उसे "अधोक्षज" कहा जाता है। जिसका अर्थ है—"सीधे तर्क के आधार पर न जानने योग्य।" वैज्ञानिक कहते हैं कि ईश्वर नहीं हैं क्योंकि वे लोग ईश्वर को सीधे तर्क के आधार पर जानने का प्रयत्न कर रहे हैं। किंतु प्रभु तो अधोक्षज हैं। इसीलिए वैज्ञानिक ईश्वर के विषय में अज्ञानी हैं क्योंकि उन्हें जानने के लिए उपयुक्त मार्ग ही वैज्ञानिकों के पास नहीं है। अस्पष्ट विज्ञान को समझने के लिए प्रामाणिक गुरु के पास जाना होगा, समर्पण भाव से उनकी बातें सुननी होंगी और सेवा करनी पड़ेगी। भगवान् श्रीकृष्ण श्रीमद्भगवद्गीता (४.३४) में व्याख्या करते हैं—**तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया**। मेरे गुरु महाराज ने एक बार कहा था, "आधुनिक जगत् ठगों और ठगे गए लोगों का समाज है।" दुर्भाग्यवश ठगे गए लोग ठगों का गुणगान कर रहे हैं और मान लो गधों का एक झुंड आकर मेरी

प्रशंसा यह कहकर करने लगे, "ओह, आप तो जगत् गुरु हैं।" उनकी इस प्रशंसा का क्या मूल्य है ? किंतु एक भला-मानव या विद्वान् यदि बड़ाई करे तो उसके शब्दों का कुछ मूल्य होगा। प्रायः वे लोग जो प्रशंसा कर रहे हैं और जिनकी प्रशंसा की जा रही है, दोनों अज्ञानी हैं। जैसा कि वेद कहते हैं, **संस्तुतः पुरुषः पशुः** अर्थात् "एक छोटे जानवर बड़े जानवर की प्रशंसा करता है।"

दयाभाव

श्रील प्रभुपाद—विधान हमें ठग रहा है, औषधि-विज्ञान धोखा दे रहा है और सरकार छल रही है। उच्च सरकारी पदाधिकारियों पर घूस लेने का आरोप है। यदि सरकार घूस लेती है और पुलिस का सिपाही घूस लेता है तब अच्छा समाज कहाँ रह गया है ? जनता उस नेता का चुनाव करती है जो उसे सुख-सुविधा देने का आश्वासन देते हैं। चूँकि सुख माया है, नेता सुख कभी नहीं दे सकता है और इस प्रकार समाज सदैव ठगों से भरा रहता है। क्योंकि लोग इस काल्पनिक सुख के पीछे दौड़ते हैं, इसलिए जैसे भी हो, लोग समय-समय पर ऐसे चरित्रहीन नेताओं को पुनः चुनते हैं।

वैष्णव लोगों का धर्म है कि ऐसे सभी अज्ञानी मनुष्यों पर दयाभाव रखें। महान् वैष्णव प्रह्लाद महाराज ने एक बार भगवान् से प्रार्थना की थी, "हे भगवन्, जहाँ तक मेरा संबंध है, मेरे सामने कोई समस्या नहीं है। मेरी अंतरात्मा सदैव आपके उच्चतम कार्यों में लीन रहती है और मैंने वस्तुओं को बहुत ही स्पष्ट रूप में समझ लिया है। किंतु मैं उन दुष्ट लोगों के बारे में बहुत चिंतित हूँ जो माया के काल्पनिक सुख के पीछे दौड़ने में अपने को लगाये हुए हैं।

वैष्णव सदैव इसी चिंता में रहता है कि लोग कैसे सुखी हों। उसे ज्ञात है कि लोग जिन वस्तुओं के पीछे व्यर्थ दौड़ रहे हैं, वे कभी संतुष्ट करने वाली नहीं हैं। पच्चास-साठ वर्ष तक लोग भ्रमपूर्ण काल्पनिक सुख के पीछे दौड़ते हैं। उसके बाद अपना कर्तव्य पूरा किए बिना अथवा यह जाने बिना कि मृत्यु के बाद क्या होगा, वे मर जायेंगे। सचमुच उनका स्थान कहाँ

जैसा होगा क्योंकि पशु को भी यह पता नहीं है कि मरने के बाद क्या होगा, वे मर जायेंगे। सचमुच उनका स्थान पशुओं जैसा होगा क्योंकि पशु को भी यह पता नहीं है कि मरने के उपरांत उसका क्या होता है ? पशु न तो जीवन का मूल्य जानता है, न यही कि वह इस संसार में किस प्रयोजन से पैदा हुआ है। माया के प्रभाव से वह सामान्यतः भोजन करता है, सोता है, विवाह करता है, अपनी रक्षा करता है और मर जाता है। बस यही उसका सब कुछ है। अज्ञानी पशु और पशुओं की प्रवृत्ति वाले मनुष्य अपने जीवन भरमें केवल पाँच काम ही बड़े परिश्रम एवं लगन के साथ करते हैं—खाना, सोना, संभोग, रक्षा करना और मरना। इसलिए वैष्णव का कर्तव्य है कि वह लोगों को शिक्षा दे कि श्रीभगवान् हैं, उनका अस्तित्व विद्यमान है और हम लोग उसके सेवक हैं। उनकी सेवा करके एवं उनके प्रति प्रेम बढ़ाकर हम लोग शाश्वत् परम सुख के साथ जीवन बिता सकते हैं।

पिंजड़े से परे

डॉ० सिंह—क्या जीवात्मा जब तक भौतिक जगत् में रहती है, उसको पदार्थ की आवश्यकता नहीं पड़ती ?

श्रील प्रभुपाद—नहीं, जीवात्मा शुद्ध रूप से आध्यात्मिक होती है। इसलिए उसको पदार्थ की आवश्यकता नहीं रहती। चूंकि उसका चिंतन रुग्ण है, फिर भी वह सोचती है कि वह कार्य करती है। नियंत्रित बद्ध जीवात्मा उस मद्यप की भाँति है जिसको शराब पीने की आवश्यकता नहीं है परन्तु सोचता है, "बिना पिये मैं मर जाऊँगा।" यही माया है अथवा छलपूर्ण आकर्षण। क्या यह सच है कि यदि मद्यप को उसका पेय न मिले तो वह मर जायगा ?

डॉ० सिंह—नहीं, किंतु एक व्यक्ति यदि भोजन न करे तो वह मर जायगा।

श्रील प्रभुपाद—यह भी ठीक नहीं है। कल रात हम लोग रघुनाथ दास गोस्वामी की चर्चा कर रहे थे। अपने परवर्ती जीवन में उन्होंने भोजन करना और सोना प्राय: छोड़ दिया था। प्रत्येक तीसरे या चौथे दिन वे केवल थोड़ा-सा मट्ठा पीते थे और दो-तीन घंटे सोते थे और किसी-किसी दिन तो वे

बिल्कुल ही नहीं सोते थे। आप प्रश्न कर सकते हैं, "वे कैसे जीवित रहे ?" वास्तव में वे सौ वर्ष तक जीवित रहे। रघुनाथ दास गोस्वामी के सम्मुख भोजन करने, सोने और रक्षा करने की समस्या नहीं थी, फिर भी वे जीवित रहे। क्योंकि वे श्रीकृष्ण के शुद्ध भक्त थे, उन्हें पूर्णतया ज्ञात था कि आत्मा शाश्वत् एवं स्वतंत्र है, यद्यपि यह इस शरीर रूपी पिंजड़े में बंद है, जिसकी इसको (आत्मा को) सचमुच कोई आवश्यकता नहीं है। मानो कि एक पक्षी पिंजड़े में बंद है। पिंजड़े के विना वह मुक्त है। लोग सोचते हैं कि शरीर रूपी पिंज़ड़े में बंद होने के नाते वे सुखी हैं, किंतु यह मूर्खतापूर्ण है। वस्तुतः हमारा इस शरीर में बंदी होना हमें डरावना बना देता है। किंतु ज्यों ही हम अपने अस्तित्त्व को पवित्र बनाते हैं तब हमें शरीर से बाहर आने की भी आवश्यकता नहीं रहती। तत्काल अभय बन जायेंगे, निडर।

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥

हम लोग तत्काल सचेत होकर अपने आध्यात्मिक अस्तित्त्व के मूल तक पहुँच जायेंगे। उसमें फिर भय, शोक और भौतिक पदार्थों की कामना का रोष मात्र भी शेष नहीं रह जायगा।

डॉ० सिंह—किंतु सभी वैज्ञानिक इसकी कुछ और अधिक व्याख्या की अपेक्षा रखेंगे कि जीवात्मा पदार्थ से किस प्रकार सर्वथा स्वतंत्र हो सकती है ?

श्रील प्रभुपाद—जब तक आप शरीर के भीतर नियमों के बंधन में बँधे हुए हैं, तब तक आप पदार्थ पर निर्भर करते हैं। उदाहरणार्थ, अफ्रीका का एक निवासी प्रकृति के अंतर्गत बँधा हुआ है क्योंकि वह इसी ठंडी ऋतु को सहन नहीं कर सकता। इसलिए वह असंतुष्ट अनुभव करता है। किंतु यहाँ पर अनेक व्यक्ति [सागर के तट पर खेलने वाले बच्चों की ओर देखकर] ऐसे हैं जो ठंड से अप्रभावित हैं। सहनशक्ति परिस्थितियों के बंधन पर निर्भर करती है। जब तक आप बन्धन से घिरे हैं तब द्वैत की भावना में सोचते

हैं। गर्म और ठण्ड की दूरी, पीड़ा और आनंद का अंतर आदि के भाव में सोचते हैं। किंतु जब आप मुक्त कर दिए जायेंगे, तब वैसे बंधनकारी विचार नहीं रह जायेंगे। आध्यात्मिक जीवन का अर्थ है बंधन से रहित, मुक्त होना—ब्रह्मभूत की स्थिति में आना। यही जीवन की पूर्णता है। बंधनयुक्त होने का तात्पर्य यह है यद्यपि जीवात्मा शाश्वत् है, किंतु शरीर रूपी बंधन में वह ऐसा सोचती है कि जन्म लेती है, मरती हैं, रोग ग्रस्त होती है, वृद्धावस्था को प्राप्त होती है। किंतु बंधन से मुक्त व्यक्ति वृद्ध नहीं होता। ब्रह्मसूत्र में श्रीकृष्ण के संबंध में कहा गया है—**अद्वैतं अच्युतं अनादि अनंत रूपं आद्यं पुराण पुरुषं नव यौवनं च**। इसका अर्थ है कि—"श्रीकृष्ण आदि पुरुष हैं वे सृष्टि के प्रथम पुरुष हैं, किंतु उनमें वृद्धावस्था नहीं आती। वे सदैव एक बीस-वर्षीय नवयुवक की भाँति दिखाई पड़ते हैं। क्योंकि वे पूर्णतः आध्यात्मिक हैं।

आठवाँ प्रातःकालीन भ्रमण

११ मई, १९७३.

लॉस ऐंजिल्स के निकट प्रशान्त महासागर के तट पर।

श्रील प्रभुपाद के साथ डॉ० सिंह और अन्य छात्रगण चल रहे हैं।

भावना का उत्कर्ष

डॉ० सिंह—श्रील प्रभुपाद जी, श्रीमद्भगवद्गीता में मुझे एक स्थान पर एक कथन मिला कि सभी जीवात्माओं से संबंधित सारी ८४,००,००० (चौरासी लाख) योनियाँ एक साथ ही रची गई हैं। क्या यह सच है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, ठीक है।

डॉ० सिंह—क्या इसका अर्थ यह है कि कुछ जीवात्माएँ विकासवाद की प्रक्रिया के अंतर्गत गए बिना ही सीधे मनुष्य योनि में आ जाती हैं ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, जीवात्माएँ एक शरीर को छोड़ कर दूसरे शरीर-रूप में प्रवेश करती हैं। शरीर-रूप पहले से ही विद्यमान है। जीवात्मा केवल अपने को एक शरीर से दूसरे में बदल लेती है, जैसे एक व्यक्ति अपने रहने के मकान को छोड़ देता है और दूसरे घर में चला जाता है। एक गृहकक्ष प्रथम श्रेणी का है, दूसरा द्वितीय श्रेणी का है और तीसरा तृतीय श्रेणी का। कल्पना करो कि एक व्यक्ति निम्न श्रेणी के गृहकक्ष से प्रथम श्रेणी के गृहकक्ष में प्रविष्ट होता है। व्यक्ति वही है, किंतु अब खर्च संबंधी उसकी क्षमता अथवा कर्म के अनुसार वह एक उच्च श्रेणी के गृहस्थ को अपने पास रख सकता

है। परंतु सच्चे उत्कर्ष का अर्थ भौतिक विकास नहीं होता वरन् उसका अर्थ है भावना का विकास। क्या आपने समझा?

डॉ० सिंह—मैं ऐसा सोचता हूं। क्या आपका तात्पर्य यह है कि यदि कोई व्यक्ति उच्चस्तर से जीवन के निचले स्तर पर गिर जाय तो क्या उसे निश्चय ही एक-एक सीढ़ी क्रमशः ऊपर उठना चाहिए?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, चूंकि आपको अधिक रुपये मिलते हैं, इसलिए आप अच्छे गृह-कक्ष में जा सकते हैं। जो भी हो, गृहकक्ष पहले से ही विद्यमान है। किंतु ऐसा नहीं है कि निम्न श्रेणी का गृहकक्ष उच्च श्रेणी का गृहकक्ष बन जाता है। वह तो डार्विन की व्यर्थ की सैद्धान्तिक मान्यता है। वह कहेगा कि गृहकक्ष ही उच्च श्रेणी का हो गया। आधुनिक वैज्ञानिक सोचते हैं कि जीव पदार्थ से उत्पन्न हुआ है। वे कहते हैं कि लाखों वर्ष पूर्व केवल पदार्थ था, किंतु जीव नहीं थे। हम लोग उनकी उस मान्यता को स्वीकार नहीं करते। दो शक्तियों में से—जीव और पदार्थ—जीव या चेतना मूल उच्चशक्ति है और फलतः पदार्थ निम्नकोटि की शक्ति है।

डॉ० सिंह—क्या ये दोनों साथ-साथ अस्तित्त्व में हैं?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, किंतु चेतना स्वतंत्र है जबकि पदार्थ परतंत्र। उदाहरणार्थ, मैं अपने हाथों या पैरों के बिना भी रह सकता हूँ। यदि ये अवयव काट कर विछिन्न कर दिए जायं तो भी मैं जीवित रहूँगा। इसलिए मैं अपने हाथों और पैरों के अधीन नहीं हूं। मेरे हाथ-पैर मेरे अधीन हैं, चेतन आत्मा के जो मेरे शरीर में है।

शाश्वत कामनाओं के हेतु शरीर

डॉ० सिंह—किंतु क्या जीव और पदार्थ साथ ही साथ उत्पन्न हुए?

श्रील प्रभुपाद—नहीं, वे "आते" बिल्कुल नहीं। वे पहले से ही अस्तित्त्व में हैं। इनके "आने" की भावना हमारे मन में इसलिए बैठ गई है क्योंकि हम लोग सीमित संसार में रहते हैं, जहाँ हम प्रत्येक वस्तु का प्रारंभ देखते हैं। इसी-लिए हम लोग वस्तुओं के "आने" की बात सोचते हैं। किंतु पदार्थ एवं

चेतना वस्तुतः पहले से ही अस्तित्त्व में है। मैं कब पैदा हुआ, मैं सोचता हूँ कि मेरे जन्म से ही संसार का प्रारंभ है। किंतु संसार तो पहले से ही विद्यमान है। दूसरा उदाहरण अग्नि का है। क्या आपने अग्नि जलाई और उसके बाद से ही अग्नि और प्रकाश का प्रारंभ हुआ ? नहीं, जब कभी अग्नि प्रज्वलित की जाती है, तत्काल वहाँ प्रकाश और गर्मी प्रकट होती है। किंतु मान लो कि मैं सोचता हूँ "अब वहाँ अग्नि है, किंतु प्रकाश और उष्णता आने के लिए मुझे अभी देर तक प्रतीक्षा करनी होगी।" यह मूर्खता नहीं है ?

डॉ० सिंह—किंतु अग्नि ही प्रकाश और उष्णता का स्रोत है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, अभी भी उष्णता और प्रकाश अग्नि के साथ ही साथ रहते हैं। उसी प्रकार अमर जीवात्माएँ विभिन्न प्रकार की अनेक शाश्वत कामनाएँ रखती हैं और सभी प्रकार की योनियाँ भी उक्त कामनाओं की पूर्ति के हेतु शाश्वत अस्तित्त्वमान रहती हैं।

डॉ० सिंह—और क्या ये जीवात्माएं विभिन्न शरीरों में उन्हीं कामनाओं के कारण रहने के लिए बाध्य की जाती है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ। उदाहरण के लिए, सरकार एक बंदीगृह का निर्माण कराती है क्योंकि उसे ज्ञात है कि समाज में अपराधी व्यक्ति होंगे। जब एक अपराधी की जाँच होती है और उसे दंड दिया जाता है तब उसके लिए जेलखाना निर्णय के समय के पहले से ही बना रहता है। उसी प्रकार ईश्वर को सर्वज्ञ कहा गया है। वह सब कुछ जानता है। अस्तु, उसे यह भी ज्ञात है कि कतिपय जीवात्माएँ अपराधी वृत्ति धारण करेंगी एवं सेवा के विरुद्ध विद्रोह करेंगी और आगे वह यह भी जानता है कि जीवात्माएँ तीनों गुणों के कारण इस भौतिक जगत् में कौन-कौन सी इच्छाएँ करती हैं। इसलिए प्रारंभ से ही सभी बँधी हुई आत्माओं से वह सभी प्रकार की योनियों का निर्माण करता है, ताकि वे इन बँधी हुई आत्माओं को अपने भीतर समेट सकें।

भौतिक प्रकृति के तीन गुण हैं—सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण। इन्हीं तीनों गुणों के आधार पर इस भौतिक जगत् की सभी विभिन्न वस्तुएँ

बनाई गई हैं। जैसे कोई लाखों आकृतियाँ बनाने के हेतु प्रारंभ में तीन रंगों—नीले, लाल और पीले को एक में मिला सकता है। इस व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने के लिए अति आवश्यक निपुणता प्रकृति में पहले से ही विद्यमान है। श्रीमद्भगवद्गीता (३.२७) के अनुसार **प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणः कर्माणि सर्वशः।** "संपूर्ण कर्म सब प्रकार से भौतिक प्रकृति के गुणों द्वारा किए जाते हैं।" और ये गुण विभिन्न प्रकार की योनियों के माध्यम से स्पष्ट रूप से प्रकट किए गए हैं, जिनमें पौधे, वृक्ष, जलजंतु, मनुष्य, देवी-देवता, बिल्ली, कुत्ते और अनेक अन्य सम्मिलित हैं, जिनकी कुल संख्या ८४,००,००० (चौरासी लक्ष) है।

श्रीभगवान् प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में परमात्मा के रूप में अपना विस्तार करते हैं। यद्यपि यह परमात्मा भौतिक शरीर में रहते हुए भी सांसारिक नहीं हैं। इतना ही नहीं वरन् वे भौतिक शरीर का मूल कारण हैं। चूंकि गर्मी और प्रकाश ये दोनों सूर्य की शक्तियाँ हैं, किंतु सूर्य को कभी ऐसा अनुभव नहीं होता कि मैं, "अत्यधिक गर्म हूं।" इसी प्रकार परमात्मा के लिए आध्यात्मिक और भौतिक शक्तियों के बीच कोई अंतर नहीं लगता क्योंकि वे दोनों भौतिक और आध्यात्मिक शक्तियाँ उन्हीं के भीतर से निकलती हैं। कभी-कभी हम देखते हैं कि बादल सूर्य को घेर लेते हैं, किंतु वास्तव में वह हमारी अपूर्णता है। हम लोग इस ग्रह पर दोनों का, सूर्य के प्रकाश और बादल के छा जाने का अनुभव करते हैं। किंतु सूर्य के ऊपर केवल सूर्य के प्रकाश का ही अनुभव होता है, चाहे बादल छा भी जायें तो भी। उसी प्रकार पदार्थ और चेतना का बँटवारा हमारा अनुभव है, यह श्रीभगवान् की ओर से नहीं है। चाहे वे तथाकथित भौतिक शरीर में अवतरित हों, अथवा आध्यात्मिक शरीर में, वे प्रभु सदैव आध्यात्मिक ही बने रहते हैं। उनके लिए पदार्थ और चेतन एक ही है क्योंकि वे शक्ति सम्पन्न हैं। वे पदार्थ को चेतन-शक्ति में और चेतन-शक्ति को पदार्थ में परिवर्तित कर सकते हैं।

डॉ० सिंह—रसायन शास्त्री और वैज्ञानिक सोचते हैं कि कुछ तत्त्व आत्मा को

भौतिक जगत् में रहने के लिए सहायक बनते हैं। उनका कहना है कि वे तत्त्व हैं—कार्बन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन और आक्सीजन। ये मुख्य तत्त्व ही मिलकर जीव की उत्पत्ति करते हैं। मैं सोचता हूँ कि वेद हमें सिखाते हैं कि जीव को विकसित होने के लिए चेतन-शक्ति पहले से अस्तित्त्व में रहने वाले इन रासायनिक तत्त्वों में प्रवेश करती है। क्या यह ठीक है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, उदाहरणार्थ, पृथ्वी उन सभी आवश्यक तत्त्वों को अपने भीतर सँजो कर रखती है जो एक पौधे को उगने के लिए आवश्यक हैं, किंतु सर्वप्रथम आपको एक बीज तो धरती में बोना ही होगा। इसी प्रकार एक माँ अपने गर्भाशय में उन सभी आवश्यक उपकरणों को दूसरा शरीर बनाने के हेतु तैयार रखती है, किंतु पिता सर्वप्रथम उसमें बीज डाले तभी बच्चा विकसित होगा। कुत्ता कुत्ते का शरीर बनाता है और एक मनुष्य मनुष्य का शरीर बनाता है। ऐसा क्यों है ? क्योंकि सभी आवश्यक उपकरण क्रमशः वहाँ विद्यमान हैं।

हम अपने शरीर में एक निश्चित मात्रा में रसायन पाते हैं, चींटी के शरीर में उससे कम मात्रा और हाथी के शरीर में उससे अधिक मात्रा में। अस्तु, मैं यदि चींटी की अपेक्षा अधिक रसायन पैदा करूँ अथवा हाथी मेरी अपेक्षा अधिक रसायन पैदा करे तब तनिक विचार करें कि ईश्वर कितने अधिक रसायनों को बना सकता है ? यही आधार है जिसके बल पर वैज्ञानिकों को सोचना चाहिए कि हाइड्रोजन और आक्सीजन को मिला कर पानी कैसे बनाया जा सकता है। अन्यथा वे लोग इस बात का पता नहीं लगा सकते कि सागर की विशाल जलराशि को बनाने के हेतु विपुल मात्रा में हाइड्रोजन और ऑक्सीजन का भंडार कहाँ से आया ? मूल स्रोत क्या है ? किंतु हम लोग उसकी खोज कर सकते हैं। यह हाइड्रोजन और आक्सीजन "विराट्-रूप" में विद्यमान हैं। अर्थात् श्रीभगवान् के शाश्वत् विराट् रूप में उनका अस्तित्त्व है। वैज्ञानिक इस सीधे सादे सत्य को क्यों नहीं समझते ? हाइड्रोजन और ऑक्सीजन सागर में पानी बनाने के लिए मिलते हैं। हम दोनों इस तथ्य को स्वीकार करते हैं। किंतु वैज्ञानिक यह सुनकर आश्चर्य चकित हो

जाते हैं कि हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के विपुल भंडार का मूल स्रोत "अचिन्त्य शक्ति" है अथवा अतुलनीय श्रीभगवान् की योगशक्ति।

"जीवन" की व्याख्या

डॉ० सिंह—जीवित और मृत की परिभाषा के संबंध में वैज्ञानिक समुदाय के अंतर्गत मैंने एक असहमति देखी है। कुछ लोगों का कहना है कि यदि किसी वस्तु को हम पुनः उत्पन्न कर सकते हैं तो वह जीवित होगी। इसलिए उनका दावा है कि उन्होंने जीव की उत्पत्ति की है, क्योंकि प्रयोगशाला में विनिर्मित कतिपय बड़े डी. एन. ए. अणु अपने को पीछे की ओर मोड़ सकते हैं। अर्थात् वे अपनी शक्ति के बल पर और अनेक अणुओं की पंक्ति खड़ी कर सकते हैं। कुछ वैज्ञानिक कहते हैं कि ये डी. एन. ए. अणु जीवित हैं और दूसरे कहते हैं कि नहीं ये मृत हैं।

श्रील प्रभुपाद—चूंकि कुछ लोग एक बात कहते हैं और अन्य लोग दूसरी बात कहते हैं, इसलिए उनका ज्ञान अवश्य ही अपूर्ण होगा।

डॉ० सिंह—क्या हम लोग जीवित की परिभाषा "चेतना युक्त" और मृत की व्याख्या "चेतना रहित" कर सकते हैं ?

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। यही अंतर है जीवित और मृत में। जैसा कि श्रीकृष्ण भगवद्गीता (२.१७) में कहते हैं—**अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम्।** जो सारे शरीरों में व्याप्त है, वह अविनाशी है। कोई भी व्यक्ति समझ सकता है कि सारे जीवित शरीरों पर क्या फैला हुआ है—यही भावना है। हम लोगों की भावना के अनुसार मृत्यु के समय हम लोगों को एक विशेष आकार का शरीर प्रदान किया जाता है। यदि आपके भीतर कुत्ते की भावना है तो आपको कुत्ते का शरीर मिलेगा और यदि आप में ईश्वर संबंधी भावना है, तो आपको देव शरीर प्राप्त होगा। श्रीकृष्ण प्रत्येक व्यक्ति को यह स्वतंत्रता देते हैं कि वह जिस प्रकार का शरीर चाहे चुन ले।

यान्ति देवव्रता देवान्पितॄन्यान्ति पितृव्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्॥

अर्थात् देवताओं को पूजने वाले देवताओं का शरीर प्राप्त करते हैं, पितरों को पूजने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं, भूतों को पूजने वाले भूतों को प्राप्त होते हैं और मेरा पूजन करने वाले भक्त मुझे ही प्राप्त होते हैं। इसलिए मेरे भक्तों का पुनर्जन्म नहीं होता।

डार्विन का निषेध

डॉ० सिंह—यदि मनुष्य को मुक्ति नहीं मिलती तो क्या उसे पुनः मानव शरीर पाने से पूर्व सभी चौरासी लाख योनियों में जन्म लेना पड़ता है ?

श्रील प्रभुपाद—नहीं, प्रकृति के नियमानुसार जीवन के केवल निम्नस्तर पर ही जीवात्मा सीढ़ी प्रति सीढ़ी प्रगति करती है। मनुष्य की आकृति में पहुंचने पर जीव को दूरदर्शितापूर्ण उन्नत भावना से सहायता पहुँचाई जाती है। अस्तु, यदि वह व्यक्ति भावना के स्तर पर उन्नत है तो वह एक कुत्ते या बिल्ली का शरीर नहीं पायेगा। उसे दूसरा मानव शरीर मिलेगा।

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते ॥

योगभ्रष्टः शब्द किसी एक ऐसे व्यक्ति की ओर संकेत करता है जो योग का अभ्यास कर रहे थे, किंतु किसी कारणवश उन्हें पूर्ण सफलता नहीं मिली। यहाँ उत्कर्ष का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है। उसे पुनः मानव शरीर प्राप्त हुआ है। वह कुत्ते या बिल्ली का शरीर नहीं पाता। जैसा कि हम अपार्टमेंट के बारे में चर्चा कर रहे थे कि यदि आप अधिक पैसा चुका सकते हैं तो आपको बेहतर गृहकक्ष रहने को मिल जायेगा। आपको पहले निम्नस्तर के गृहस्थ में नहीं आना पड़ेगा।

डॉ० सिंह—आप जो कुछ कह रहे हैं वह डार्विन के विकासवाद के सिद्धांत के बिल्कुल विरुद्ध है।

श्रील प्रभुपाद—डार्विन एक दुष्ट है। उसका सिद्धांत क्या है ? हम डार्विन के दर्शन को ठुकरा देते हैं। जितना ही हम डार्विन के सिद्धांतों को ठुकराते हैं उतना ही हम आध्यात्मिक भावना के क्षेत्र में उन्नत होते हैं।

डॉ० सिंह—अनेक वैज्ञानिक डार्विन के सिद्धांतों पर शंका करते हैं ? किंतु डार्विन के समर्थक कहते हैं कि जीवन पदार्थ से निकला और उनका विश्वास है कि सृष्टि के प्रारंभ में उच्चकोटि की योनियाँ जैसे पशु और मनुष्य योनियाँ नहीं थीं।

श्रील प्रभुपाद—डार्विन और उसके अनुयायी दुष्ट है। यदि सृष्टि के प्रारंभ में उच्च कोटि की योनियाँ नहीं थीं तो आज वे कैसे अस्तित्त्व में हैं ? और निम्न श्रेणी की योनियाँ आज भी क्योंकर विद्यमान हैं ? उदाहरण के लिए आज वर्तमान क्षण में हम दोनों को देखते हैं बुद्धिमान मनुष्य और मूर्ख गधा। ये दोनों जीवात्माएँ क्यों एक ही साथ विद्यमान हैं ? गधे का स्वरूप ऊपर विकसित होकर लुप्त क्यों नहीं हो गया ? हम लोग किसी बंदर को मनुष्य का बच्चा पैदा करते हुए कभी क्यों नहीं देखते हैं ? डार्विनवाद का यह सिद्धांत कि मनुष्य का जीवन अमुक-अमुक समय में प्रारंभ हुआ, मूर्खतापूर्ण है। भगवद्गीता कहती है कि आप सीधे ही अपनी इच्छानुसार किसी भी योनि में अपने को बदल सकते हैं। कभी मैं अमेरिका की यात्रा करता हूँ कभी आस्ट्रेलिया की और कभी अफ्रिका की। ये देश पहले से ही अस्तित्त्व में हैं। मैं केवल उनके बीच हो कर यात्रा करता हूँ। ऐसा नहीं है कि मैं यहाँ आया हूँ इसलिए मैंने अमेरिका का निर्माण किया है अथवा मैं ही अमेरिका बन गया हूँ और अभी बहुत से ऐसे देश हैं, जिनको मैंने देखा ही नहीं है। क्या इसका अर्थ यह हुआ कि वे अस्तित्त्व में नहीं है ? वैज्ञानिक जो डार्विन का समर्थन करते हैं, अज्ञानी हैं। भगवद्गीता कहती है कि सभी योनियाँ एक साथ ही अस्तित्त्व में हैं और जिस योनि में जन्म लेने की आपकी इच्छा हो, उसमें आप जा सकते हैं। यदि आपकी इच्छा हो तो आप ऊपर श्रीभगवान् के वैकुंठ धाम भी जा सकते हो। भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा यह सब भगवद्गीता में घोषित किया गया है।

नवाँ प्रातःकालीन भ्रमण

१३ मई, १९७३.

चेवियट हिल्स पार्क, लास ऐंजिल्स ।

श्रील प्रभुपाद के साथ हैं डॉ० सिंह, कर्णधार दास अधिकारी और अन्य छात्रगण ।

मनुष्य का कुत्ते के रूप में विकास

श्रील प्रभुपाद—तथाकथित वैज्ञानिक एक छलयुक्त सिद्धांत में विश्वास कर रहे हैं। श्रीकृष्ण कहते हैं **अहं सर्वस्य प्रभवः** "मैं ही सभी वस्तुओं का मूल स्रोत हूँ।" (भगवद्गीता १०.८) श्रीकृष्ण जीवन हैं, कृष्ण मृत पत्थर नहीं हैं।

डॉ० सिंह—इसलिए जीव से ही पदार्थ की उत्पत्ति हुई, क्यों ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, और पदार्थ जीव के आधार पर ही बढ़ता है। मेरा शरीर मेरी ही आत्मा के बल पर विकसित होता है। उदाहरणार्थ मैंने यह ओवर-कोट पहन रखा है, जो कि मेरे शरीर के आकार के अनुसार ही बनाया गया है। किंतु मैं यदि यह सोचूँ, "मैं यह ओवरकोट हूँ ?" तो मूर्ख समझा जाऊँगा।

विद्यार्थी—श्रील प्रभुपाद, धातुविज्ञान के पंडितों ने यह सिद्ध किया है कि पर्वत तलछट की गतिविधियों के कारण बढ़ रहे हैं। क्या यह विकास

परमात्मा की उपस्थिति के कारण है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, श्रीमद्भागवत में वर्णन है कि पर्वत भगवान् के शरीर क हड्डियाँ हैं और घास उनके शरीर के रोम। इसलिए इस विचार से ईश्व का शरीर सबसे बड़ा है।

डॉ० सिंह—श्रील प्रभुपाद, पशुओं के शरीर में आत्मा के प्रवेश और मनुष्यों क शरीर में आत्मा के पुनर्जन्म में क्या अंतर है ?

श्रील प्रभुपाद—पशुओं का पुनर्जन्म केवल एक दिशा में ही—ऊपरी स्तर में होत है, किंतु मनुष्य की आत्मा ऊपर नीचे किसी भी स्तर पर पुनर्जन्म ले सकत है। शरीर जीवात्मा की इच्छानुसार ही दिया जाता है। निम्नस्तर के प केवल एक प्रकार की ही इच्छा रखते हैं, किंतु मनुष्यों की सहस्रों, लाख इच्छाएँ होती हैं—पशुओं की इच्छाओं के साथ मानव-कामनाएँ भी। प्रकृ के नियमानुसार निम्नस्तर की योनियाँ पशु के रूप से उच्च मानव के रू में उन्नत होती चली आती हैं। किंतु एक बार मनुष्य के रूप में प्रतिष्ठि हो गए और श्रीकृष्णभावनामृत का भाव अपने भीतर नहीं जगाया तो आपक पुनः कुत्ते या बिल्ली के शरीर में लौटना पड़ेगा।

निर्वाण

डॉ० सिंह—मनुष्य जीवन के स्तर से ऊपर और नीचे दोनों दिशाओं में जीव ज सकता है, वैज्ञानिकों को इसकी कोई सूचना नहीं है।

श्रील प्रभुपाद—इसलिए मैं कहता हूँ कि वे लोग दुष्ट हैं। उन्हें कोई ज्ञान नह है, फिर भी उनका दावा है कि वे, लोग वैज्ञानिक हैं। सच्चा विज्ञान त भगवद्गीता में है, जहाँ श्रीकृष्ण कहते हैं—**यान्ति देवव्रता देवान्पितॄन्यान्ति पितृव्रताः।** (गीता ६.२५) इसका अर्थ यह है कि इस जीवन में व्यक्ति जि की भी पूजा करता है, वह दूसरे जन्म में पाने वाले शरीर के प्रकार क संकल्प कर लेता है। किंतु व्यक्ति यदि श्रीकृष्ण की उपासना करता है तो व पुनर्जन्म की प्रक्रिया को पूर्णतया समाप्त कर देता है। **"यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम।"** "जब व्यक्ति मेरे परमधाम में चला जाता है, तब व

इस जन्म-मृत्यु संबंधी भौतिक जगत् में कभी नहीं लौटता।" [गीता ८.२१] आध्यात्मिक जगत् तक मनुष्य का उत्कर्ष (**संसिद्धिम् परमाम्**) मानव जीवन की चरम सिद्धि है। भगवद्गीता पढ़िये, उसमें सब कुछ है। किंतु वैज्ञानिक इस पूर्णता की कोई जानकारी नहीं रखते। यहाँ तक कि वे लोग जीवात्मा के इस शरीर से परे अस्तित्व में भी विश्वास नहीं करते।

डॉ० सिंह—वे लोग जीवात्मा के संबंध में कोई चर्चा नहीं करते। वे केवल शरीर के संबंध में बात करते हैं।

विद्यार्थी—उनकी मान्यता बुद्ध दर्शन के निकट जान पड़ती है। बुद्ध धर्मावलम्बी कहते हैं कि शरीर एक भवन की तरह है। जैसे एक मकान लकड़ियों के सहारे एक में जुड़ाकर टिका हुआ है। उसी प्रकार मनुष्य का शरीर विभिन्न रसायनों के द्वारा एक में जुड़ा हुआ है। और जब शरीर मरता है तब वह उस मकान की तरह है जो धराशायी हो जाता है और फिर वहाँ भवन शेष नहीं रह जाता, उसी प्रकार शरीर सामान्य रसायनों में परिवर्तित हो जाता है और फिर वहाँ न तो शरीर रहता न जीवन ?

श्रील प्रभुपाद—वह स्थिति निर्वाण की दशा कही जाती है। और तब इन उपकरणों की सहायता से आप दूसरा शरीर या दूसरा गृहनिर्माण कर सकते हैं। यही बुद्धवाद है। बुद्ध मतावलंबी आत्मा के संबंध में कोई ज्ञान नहीं रखते।

भाग्य और कर्म

विद्यार्थी—कुछ वैज्ञानिक तर्क करते हैं कि एक ही शरीर में अनेक आत्माएँ रहती हैं। वे चींटी का उदाहरण देते हैं। यदि आप उन्हें बीच से काट कर दो भागों में विभक्त कर दें तो दोनों ही भाग जीवित रहेंगे। उनके कथनानुसार यह सिद्ध होता है कि मूल शरीर में दो आत्माएँ पहले से ही विद्यमान थीं।

श्रील प्रभुपाद—नहीं। यह तो सामान्यतः ऐसा है कि कीट के शरीर के अन्य भाग में दूसरी नई आत्मा आकर बस गई है।

डॉ० सिंह—क्या आत्मा के लिए यह अनिवार्य है कि वह आध्यात्मि[illegible]ावा

भौतिक शरीर अवश्य धारण करे ?

श्रील प्रभुपाद—आत्मा पहले से ही एक आध्यात्मिक शरीर रखती है जिसे भौतिक शरीर ऊपर से ढक लेता है। मेरा भौतिक शरीर मेरे ही ऊपर विकसित होता है—मेरी आत्मा के बल पर, किंतु मेरा भौतिक शरीर अप्राकृत है। सच्चा शरीर तो आध्यात्मिक है। मैं उन अनेक विविध शरीरों को स्वीकार कर रहा हूँ, जो मेरे विधान के अनुसार अस्वाभाविक हैं। मेरी वैधानिक स्थिति श्रीकृष्ण का दास बनने की है। जब तब मैं उस पद तक नहीं पहुँचता, तब तक मैं पदार्थ का सेवक बना रहता हूँ और मुझे भौतिक शक्तियों के नियमानुसार अनेक शरीर धारण करने पड़ते हैं। हमें एक शरीर प्राप्त होता है फिर हम उसे त्याग देते हैं। हम कुछ और अन्य वस्तु की कामना करते हैं और फिर दूसरा शरीर पा जाते हैं। भौतिक जगत् के कड़े नियमों के अनुसार यह प्रक्रिया चलती रहती है। लोग सोचते हैं, किंतु वे सदैव प्रकृति के कर्म विधान के अंतर्गत रहते हैं।

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥

"विमोहित आत्माएँ भौतिक जगत् के तीनों गुणों के प्रभाव के अंतर्गत रह कर सोचती हैं कि प्रकृति के सारे कर्म हम करते हैं अर्थात् वे अपने को ही सारे कर्मों का कर्ता मानते हैं। (गीता ३.२७) इस विमोह का कारण यह है कि जीवात्माएँ सोचती हैं—"मैं यह शरीर हूँ।"

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ॥

"इस श्लोक में यंत्र शब्द अथवा "मशीन" का अर्थ है कि किसी भी योनि में हम लोग विभिन्न शरीरों में भ्रमण कर रहे हैं जो भौतिक जगत् के द्वारा प्रदत्त मशीन की भाँति हैं। कभी-कभी हम उच्च स्तर की योनियों में भ्रमते हैं और कभी निम्न स्तर की। किंतु यदि गुरुकृपा से और श्रीकृष्ण की दया

से व्यक्ति के भीतर समर्पित भावना का बीज अंकुरित हो जाता है और वह उसे और बढ़ाता है तो वह व्यक्ति जन्म और मरण के चक्कर से बच सकता है। तब उसका जीवन सफल है। अन्यथा उसे ऊपर नीचे विभिन्न योनियों में घूमना पड़ेगा। कभी वह घास की एक पत्ती बनेगा, कभी वह सिंह अथवा ऐसा ही कुछ और।

ज्ञान के रूप में अज्ञान का विज्ञापन

विद्यार्थी—तो भोग करने की कामनाओं के कारण ही हम भौतिक शरीर प्राप्त करते हैं और श्रीकृष्ण को पाने की इच्छा क्या हमें स्वाभाविक स्थान पर लाती है?

श्रील प्रभुपाद—हाँ।

डॉ० सिंह—किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि निम्न प्रकृति के विरुद्ध हमारा संघर्ष निरंतर चल रहा है। यद्यपि हम श्रीकृष्ण की सेवा करना चाहते हैं तथापि आत्मतुष्टि के हेतु उठने वाली इच्छाओं के विरुद्ध भी हम बराबर लड़ रहे हैं। क्या यह सदैव चलता है?

विद्यार्थी—शरीर भीतर से एक निरंकुश शासक की भाँति है।

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। इसका अर्थ यह है कि आप लोग भौतिक अथवा माया के कठोर नियंत्रण में हैं।

डॉ० सिंह—तथापि हम भी भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा की कामना करते हैं?

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। एक चोर को यह ज्ञात होगा कि यदि वह चोरी करेगा तो वह गिरफ्तार किया जायगा और जेल में बंदी बनाया जायगा। उसने दूसरे चोरों को पकड़े जाते देखा भी होगा, तथापि वह अभी भी चोरी करता है। यद्यपि उसे ज्ञात है कि वह राज-सत्ता के अंतर्गत है, तिस पर भी वह अपनी इच्छानुसार कार्य करता है। इसे तामस अथवा अज्ञान कहते हैं। इसलिए ज्ञान आध्यात्मिक जीवन का प्रारंभ करता है। भगवद्गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन को ज्ञान देते हैं, वे शिक्षा देते हैं—"तुम यह शरीर नहीं हो।" इसलिए ज्ञान आध्यात्मिक जीवन का प्रारंभ है। किंतु वह विश्वविद्यालय कहाँ है जो इस ज्ञान की शिक्षा देता है? डॉ० सिंह, क्या आप मुझे बता सकते हैं कि कहाँ

है वह विश्वविद्यालय, जो इस ज्ञान की शिक्षा देता हो ?

डॉ० सिंह—कोई विश्वविद्यालय ऐसा नहीं है।

श्रील प्रभुपाद—शिक्षा की यही स्थिति है—उसमें ज्ञान नहीं है। वे सामान्यतः ज्ञान के रूप में अज्ञान का विज्ञापन करते हैं।

डॉ० सिंह—किंतु वैज्ञानिक यदि इस बात को जान गए कि वे शरीर नहीं हैं, तब तो उनका पूरा-पूरा सोचने का ढंग ही बदल जायगा।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, हम वही चाहते हैं।

विद्यार्थी—किंतु वे लोग अपनी असफलता को स्वीकार नहीं करना चाहते।

श्रील प्रभुपाद—तब तो यह और भी मूर्खता है। यदि आप मूर्ख हैं, किंतु बुद्धिमान होने का दिखावा करते हैं, तब तो यह और मूर्खता है। तब आप प्रगति नहीं कर सकते हैं और यदि आप अज्ञान में रहते हैं तथा स्वयं अपने को बुद्धिमान के रूप में विज्ञापित करते हैं, तब तो आप बहुत बड़े धोखेबाज हैं। आप अपने को छल रहे हैं और दूसरों को भी धोखा दे रहे हैं। लोग सभ्यता की इस भौतिक उन्नति के पीछे इतने पागल हो गए हैं कि वास्तव में वे लोग बिल्ली एवं कुत्ते भी भाँति बन गए हैं। उदाहरणार्थ उन्होंने एक आप्रवासन विभाग खोल रखा है और जैसे ही आप किसी देश में प्रवेश करते हैं, ये कुत्ते जाते हैं और कहते हैं, "जाल, जाल, जाल। आप यहाँ क्यों आए हैं ? आपका व्यवसाय क्या है ? यह एक प्रहरी की गतिविधि है। एक प्रथम श्रेणी के भले मनुष्य के पास से पिस्तौल की जाँच की जाती है। लोगों का विश्वास नहीं किया जा सकता है और आजकल तो अनेक शिक्षित, बदमाश एवं चोर हैं। अस्तु, प्रगतिशील का क्या अर्थ है ? क्या हम कह सकते हैं कि शिक्षा का अर्थ प्रगतिशीलता है ? क्या यह सभ्यता है ?

तर्क और ज्ञान के आधार पर अज्ञान के विरुद्ध संघर्ष

विद्यार्थी—कुछ लोग कहते हैं कि वियतनाम युद्ध का एक कारण यह भी था कि कम्युनिष्ट नास्तिक थे। यह आस्तिक और नास्तिक के बीच का झगड़ा था। कम से कम युद्ध के लिए एक बहाना यह भी दिया गया था।

श्रील प्रभुपाद—हम भी नास्तिक को मारने के लिए तैयार हैं। परंतु वह मारना उपदेश के द्वारा होगा। यदि मैं आपके अज्ञान को नष्ट कर दूँ तो यह भी मारना ही कहा जायगा। मारने का अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति हाथ में तलवार उठाए।

डॉ० सिंह—युद्ध के हेतु एक नवीन विधि ?

श्रील प्रभुपाद—नहीं। तर्क एवं ज्ञान के बल पर अज्ञान के विरुद्ध युद्ध सदैव रहा है। जीवन में शारीरिक मान्यता शरीर को अधिक महत्त्व देना पशु जीवन है। पशु पदार्थ और शक्ति के बारे में नहीं जानता और जो व्यक्ति शरीर को अधिक महत्त्व देने वाले सिद्धांत का पोषक है, वह जानवर से बढ़कर नहीं है। जब एक जानवर "बात करता है" बुद्धिमान व्यक्ति हँसता है। ऐसी "बात" मूर्खता है। पशु ज्ञान की बात नहीं कर सकता।

विद्यार्थी—कम-से-कम पशु कुछ नियमों-सिद्धांतों के आधार पर जीते हैं। वे किसी को अनावश्यक मारते नहीं और आवश्यकता पड़ने पर ही भोजन करते हैं, जबकि मनुष्य अनावश्यक रूप से दूसरों को मारता है और अनावश्यक भोजन करता है। इसलिए एक विचार से मनुष्य पशुओं की अपेक्षा निम्नस्तर के हैं।

श्रील प्रभुपाद—अस्तु, हमको पशुओं से अधिक कष्ट झेलना होगा। श्रीकृष्ण-भावनामृत एक छलपूर्ण, भावुक धार्मिक आन्दोलन नहीं है। वह एक वैज्ञानिक आन्दोलन है और इसकी संरचना मानव को पीड़ा से मुक्ति दिलाने के हेतु हुई है।

डॉ० सिंह—वैज्ञानिक और अन्य लोग कहते हैं कि विश्व में प्रत्येक वस्तु संयोग से घट रही है।

श्रील प्रभुपाद—इसलिए क्या वे लोग इस विषय पर पुस्तकें भी संयोग से ही लिख रहे हैं ?

कर्णधार—उनका कहना है कि पुस्तकें भी संयोग से ही लिखी गई हैं।

श्रील प्रभुपाद—तब उन लोगों का क्या महत्त्व है ? संयोग से तो कुछ भी लिखा जा सकता है।

डॉ० सिंह—फ्रांसीसी वैज्ञानिक डॉ० जे० मोनोड को सन् १९६५ में नोबुल पुरस्कार मिला। वह कहता है कि प्रत्येक वस्तु संयोग से प्रारंभ हुई। और संयोग से ही कुछ रसायन मिले और मूल जीवाणुओं का निर्माण हुआ।

श्रील प्रभुपाद—किंतु रसायन कहाँ से आए ?

डॉ० सिंह—उनके मतानुसार वे कण भी सामान्यतः संयोग से ही निर्मित हुए और जब आवश्यकता पड़ी, रसायन के कण जीवाणु स्वतः उत्पन्न हो गए।

श्रील प्रभुपाद—जब प्रत्येक वस्तु संयोग से ही घटित हो रही थी, तब वहाँ आवश्यकता कैसे होगी ? संयोग और आवश्यकता की बात एक ही साँस में वह कैसे कह सकता है ? यह मूर्खतापूर्ण बात है। यदि प्रत्येक वस्तु संयोग से ही प्रेरित है, तब लोग अपने बच्चों को पाठशाला में क्यों भेजते हैं ? क्यों नहीं संयोग के आधार पर ही उन्हें विकसित होने देते ? कल्पना कीजिए कि मैं एक कानून तोड़ता हूँ, "अच्छा, यह संयोग से घटित हो गया है।" क्या मैं क्षमा कर दिया जाऊँगा ?

डॉ० सिंह—तब क्या अज्ञान के कारण अपराध होता है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, यही कारण है—मेरा अज्ञान।

—यह कहना निश्चित रूप से मूर्खतापूर्ण होगा कि एक वायलिन जैसा सुंदर वाद्ययंत्र संयोग से बनाया गया।

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। यह सब से अधिक खेदजनक बात है कि ऐसा दुष्ट मान्यता प्राप्त करे। वह मूर्खतापूर्ण बातें कर रहा है और उसे मान्यता मिल रही है।

दसवाँ प्रातःकालीन भ्रमण

१४ मई, १९७३.
चेवियट हिल्स पार्क, लास ऐंजिल्स।

श्रील प्रभुपाद के साथ डॉ० सिंह और अन्य छात्रगण चल रहे हैं।

वैज्ञानिक की भूल

श्रील प्रभुपाद—वैज्ञानिकों की भूल यह है कि वे भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों शक्तियों के संबंध में अज्ञानी हैं। वे कहते हैं कि प्रत्येक वस्तु भौतिक है और वह पदार्थ में से उत्पन्न होती है। उनके सिद्धांत की त्रुटि यह है कि जीवनी-शक्ति के स्थान पर पदार्थ से प्रारंभ करते हैं। चूंकि पदार्थ जीवनी-शक्ति से उत्पन्न होता है इसलिए एक प्रकार से प्रत्येक वस्तु आध्यात्मिक है। आध्यात्मिक शक्ति एक स्रोत है और वह भौतिक शक्ति के बिना अस्तित्त्व में नहीं रह सकती। यह कहना सच है कि अंधकार प्रकाश से प्रारंभ होता है न कि प्रकाश अंधकार से प्रारंभ होता है। वैज्ञानिक सोचते हैं कि चेतना पदार्थ के भीतर से फूटती है। यथार्थ में चेतना सदैव विद्यमान रहती है, किंतु जब यह अज्ञान के पर्दे से घिर जाती है अथवा च्युत हो जाती है, तब वह संज्ञाशून्य का एक रूप धारण कर लेती है।

इसलिए "भौतिक" का अर्थ है श्रीकृष्ण को भूलना और "आध्यात्मिक" का अर्थ है श्रीकृष्ण के प्रति पूर्ण भावना। क्या यह स्पष्ट है ? यह समझने

का प्रयास दिखाई नहीं देता, तब हम अंधकार में रहते हैं। सूर्य के प्रकाश में बादल नहीं रहते क्योंकि उनका रहना सूर्य की प्रकृति के विरुद्ध होगा। किंतु सूर्य की शक्ति के सहारे अन्य वस्तुएँ अस्थाई रूप में निर्मित होती हैं, जैसे कुहरा, बादल और अंधकार। ये निर्माण अस्थाई हैं, किंतु सूर्य स्थाई है। इसी प्रकार भौतिक प्रकृति अस्थाई है, किंतु आध्यात्मिक प्रकृति स्थाई है। श्रीकृष्णभावनामृत का आशय है इस भौतिक प्रकृति से मुक्त होकर स्थाई आध्यात्मिक प्रकृति को प्राप्त करना। परिवर्तनशील वातावरण नहीं।

डॉ० सिंह—क्या यह संशयग्रस्त भावना आध्यात्मिक शक्ति के द्वारा निर्मित है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ।

डॉ० सिंह—और क्या पदार्थ भी आध्यात्मिक शक्ति के द्वारा ही निर्मित है ?

श्रील प्रभुपाद—**अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।** श्रीकृष्ण कहते हैं—"मैं सारे आध्यात्मिक एवं भौतिक जगत् का मूल कारण हूँ। प्रत्येक वस्तु मुझसे उत्पन्न होती है।" [गीता १०.८] श्रीकृष्ण ही सारी अच्छी बुरी वस्तुओं के जन्मदाता हैं। वस्तुतः "बुरा और अच्छा" यह भौतिक विभाजन है। श्रीकृष्ण का निर्माण उत्तम है, और श्रीभगवान् तो सदैव अच्छा है ही। जिसे आप बुरा समझते हैं, वह भगवान् के लिए उत्तम है। इसलिए हम लोग श्रीकृष्ण को ठीक-ठीक समझ नहीं सकते। वे कुछ ऐसा कर रहे हैं, जो हमारी दृष्टि में बुरा हो सकता है, किंतु उनके लिए बुरा और अच्छा ऐसा कुछ नहीं है। उदाहरणार्थ, श्रीकृष्ण ने सोलह हजार पत्नियों के साथ व्याह किया। कुछ लोग इसकी आलोचना करेंगे, "ओह, वे स्त्रियों के पीछे पागल थे।" किंतु वे पूर्ण चित्र नहीं देखते हैं। श्रीकृष्ण की शक्ति इतनी अधिक है कि उन्होंने सोलह सहस्र विभिन्न पतियों के रूप में अपना विस्तार कर लिया।

"प्रत्येक वस्तु एक है" कहना मूर्खता है।

डॉ० सिंह—आपने कहा था कि भौतिक जगत् का यह संशयपूर्ण कुहरा अस्थाई है। फिर इस क्षणभंगुर वस्तु से अपने को मुक्त करने की चिंता हमें करनी चाहिए ?

श्रील प्रभुपाद—अपने शरीर पर आप कपड़ा क्यों धारण करते हैं ? नग्न रहकर आप चल फिर सकते हैं। कुछ घंटों में वातावरण स्वच्छ हो जायगा। तब आप शरीर को क्यों ढँकते हैं ?

डॉ० सिंह—खतरा अब है।

श्रील प्रभुपाद—जब कभी भी हो, आप अपने शरीर को ढँकने का प्रयत्न क्यों करते हैं ?

डॉ० सिंह—असुविधा से अपने को बचाने के लिए।

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। अन्यथा आप असुविधा में पड़ेंगे। कपड़े पहनने के विषय में चिंता न करना—मायावाद—सिद्धांत है। "प्रत्येक वस्तु अपने आप आएगी, तो चिंता क्यों की जाय ? प्रत्येक वस्तु एक है।" यह एक मूर्खतापूर्ण सिद्धांत है। मायावाद दर्शन यह है कि भगवान् एक है और प्रत्येक वस्तु तथा प्रत्येक जीवात्मा भगवान् के समान है।

रसायन शास्त्रियों के साथ हमारा कोई झगड़ा नहीं है। यदि वे जीव से प्रारंभ करें, किंतु दुर्भाग्य से वे कहते हैं कि प्रत्येक वस्तु अंधकार से प्रारंभ होती है अर्थात् मृतक पदार्थ, हम लोग इसी का विरोध करते हैं। हम कहते हैं, "जीव से प्रारंभ करो।" और वे कहते हैं, "नहीं, पदार्थ अंधकार से प्रारंभ करो।" वे अंधकार में हैं, इसका कारण साधारण है। यदि एक व्यक्ति अंधकार से प्रकाश में जाता है तो वह सोचता है कि अंधकार ही प्रारंभ है। कल्पना कीजिए कि आप अपने जीवन भर अंधकार में रहे और अचानक आप अभी प्रकाश में आते हैं। तब आप सोचेंगे, "ओह, प्रकाश अंधकार से निकला है।" वास्तव में जब प्रकाश मंद पड़ता है तब अंधकार का प्रारंभ होता है। अंधकार प्रकाश को जन्म नहीं देता।

डॉ० सिंह—तब क्या अंधकार प्रकाश पर निर्भर करता है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, अथवा दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि अंधकार नहीं है। जब प्रकाश मंद पड़ता है तब हम हम अंधकार का अनुभव करते हैं। उसी प्रकार जब हमारी आध्यात्मिक चेतना अथवा श्रीकृष्णभावनामृत मंद पडता है, तब हमारी भावना भौतिक हो जाती है।

प्रातःकाल हम जागते हैं और सायंकाल तक थक जाते हैं एवं सोने के लिए चले जाते हैं। जब जीवन में किसी प्रकार से व्यवधान पड़ता है, हम सोचते-सोचते सो जाते हैं। हम रात में सोते हैं और जब प्रातःकाल उठते हैं तब हमारी समझ में यह बात आ जाती है कि हमारा जागरण अथवा "जीवन" सोने की दशा से अस्तित्व में नहीं आया हैं। यहाँ तक अब मैं सो रहा था तब भी मैं जीवित था और उठने पर अब भी जीवित हूँ। यह स्पष्टतया समझ लेना चाहिए। अपनी माँ के गर्भ से बच्चा पैदा होता है। वह सोचता है कि उसका जीवन उस दिन से प्रारंभ हुआ जब वह माँ के गर्भ से बाहर निकला। किंतु यह तथ्य नहीं है। वस्तुतः वह शाश्वत है। उसने अपनी माँ के गर्भाशय में अपने भौतिक शरीर का निर्माण किया जबकि वह अचेतन अवस्था में था और जैसे ही उसकी शारीरिक रचना पर्याप्त विकसित हो गई वैसे ही वह अपनी माँ के गर्भाशय से बाहर निकला और पुनः चेतना में आ गया।

सिंह—और वह मृत्यु के समय पुनः निद्रा में निमग्न हो जाता है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ। वह भगवद्गीता (८.१९) में वर्णित है—

भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।
रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे॥

"वही यह जीव-समुदाय प्रगट हो-हो कर रात्रि के आने पर लय होता है और दिन के आने पर कर्म के वश हुआ फिर व्यक्त होता है।"

हम ये शरीर नहीं हैं

श्रील प्रभुपाद—आप यह फूल देखते हैं? यह पुनः चेतना में लौटा है और शीघ्र ही यह सूखा एवं मृत हो जायगा। यही भौतिक जीवन है। जीवन का अर्थ है फूल का केवल खिलना, उसकी मृत्यु नहीं। पदार्थ और शक्ति में यही अंतर है। गत जीवन में मेरी जो भावना थी, उसी के अनुसार मैंने यह शरीर प्राप्त किया है और इस जीवन में जो भावना रहेगी उसी के अनुसार

आगामी जीवन में मुझे नया शरीर मिलेगा। यह भी श्रीमद्भगवद्गीता (८.६) में निश्चित किया गया है—

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥

"हे कुंतीपुत्र अर्जुन! जिस-जिस भी भाव का स्मरण करते हुए जीव देह को त्यागता है, उस उसको ही निस्संदेह प्राप्त होता है, क्योंकि वह जीवन में सदा उसी भाव से भावित रहा है।"

डॉ० सिंह—श्रील प्रभुपादजी, यदि हम अपने इस जीवन की भावना के अनुरूप ही सदैव आगामी जीवन में शरीर प्राप्त करेंगे तो यह कैसे होता है कि हम अपने पूर्वजीवन को स्मरण नहीं कर पाते?

श्रील प्रभुपाद—आपने गत वर्ष जो कुछ किया क्या वह प्रत्येक बात आपको स्मरण है, अथवा कल आपने क्या किया वह सब स्मरण है?

डॉ० सिंह—नहीं, मुझे स्मरण नहीं है।

श्रील प्रभुपाद—यह आपकी प्रकृति है, आप भूल जाते हैं।

डॉ० सिंह—कुछ बातें?

श्रील प्रभुपाद—और कुछ लोग दूसरों की अपेक्षा अधिक भूल जाते हैं, किंतु हम सब भूलते हैं।

डॉ० सिंह—क्या यह भौतिक प्रकृति का सिद्धांत है?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, यह चोरी करने जैसा है। एक जेब काटने वाला है और दूसरा बैंक में डाका डालने वाला, किंतु दोनों चोरी कर रहे हैं।

डॉ० सिंह—जब हम स्वप्न देखते हैं तब क्या सूक्ष्म विलक्षण तत्त्वों द्वारा ले जाये जाते हैं?

श्रील प्रभुपाद—आप प्रकृति के द्वारा ले जाये जाते हैं। श्रीकृष्ण भगवद्गीता (३.२७) में कहते हैं—

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः
अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते।

"संपूर्ण कर्म वास्तव प्रकृति के गुणों द्वारा सम्पादित होते हैं, परंतु तीनों गुणों से उत्पन्न अहंकार से मोहित जीवात्मा अपने को इनका कर्ता मान बैठता है।" हम अपनी वस्तुस्थिति को भूल जाते हैं, क्योंकि हम भौतिक प्रकृति के प्रभाव में रहतें हैं।

आध्यात्मिक जीवन का सर्वप्रथम पाठ यह है कि हम लोग यह शरीर नहीं है? वरन् हम शाश्वत आत्मा हैं। एक समय आप एक बच्चे थे। अब आप विकसित मनुष्य हैं। आपका बचपन का शरीर कहाँ हैं? वह शरीर अस्तित्त्व में नहीं है, किंतु आप अभी भी विद्यमान हैं, क्योंकि आप शाश्वत हैं। आपका शरीर बदल गया है, किंतु आप नहीं बदले हैं। यही अमरत्व का प्रमाण है। स्मरण करें कि आपने कल कुछ कार्य किया और कुछ कार्य आज, किंतु आप अन्य वस्तुओं को भूल जाते हैं। आपका कल वाला शरीर आज का शरीर नहीं है। आप इसे स्वीकार करते हैं अथवा नहीं? आप यह नहीं कर सकते हैं कि आज १३ मई, १९७३ है। आप यह भी नहीं कह सकते कि आज बीता हुआ कल है। तेरहवीं मई कल थी। दिन बदल गया है, किंतु आप अभी भी बीते कल का स्मरण रखते हैं और यही आपकी स्मृति शाश्वत होने का प्रमाण है। शरीर बदल गया है, किंतु आप उसे स्मरण करते हैं, इसलिए आप शाश्वत हैं, यद्यपि शरीर अस्थायी है। यह प्रमाण बड़ा सीधा-सादा है। यहाँ तक कि एक बच्चा भी इसे समझ सकता है। क्या यह समझना कठिन है?

बदलते शरीर

डॉ० सिंह—लोग अधिक प्रमाण चाहते हैं।

श्रील प्रभुपाद—और अधिक क्या चाहिए? शाश्वतता एक सामान्य तथ्य है। मैं एक शाश्वत आत्मा हूँ मेरा शरीर बदल रहा है, किंतु मैं परिवर्तित नहीं होता। उदाहरणार्थ अब मैं एक वृद्ध मनुष्य हूँ। कभी-कभी मैं सोचता हूँ, "ओह, मैं कूदा और खेला करता था, परंतु अब मैं कूद नहीं सकता हूँ क्योंकि मेरा शरीर बदल गया है।" मैं कूदना चाहता हूँ, किंतु ऐसा कर नहीं

सकता । कूदने की प्रवृत्ति शाश्वत है। किंतु अपने बूढ़े शरीर के कारण ऐसा कर नहीं सकता।

डॉ० सिंह—विरोधी लोग यह कहेंगे कि हमारे देखने में भावना की प्रकृति ऐर है कि वह केवल एक शरीर तक ही चलती है।

श्रील प्रभुपाद—यह मूर्खता है, भगवद्गीता (२.१३) में श्रीकृष्ण समझाते हैं—

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥

"जिस प्रकार वद्धजीव को इस देह में क्रम से कौमार, यौवन तथा वृद्धावस्थ की प्राप्ति होती है, उसी भाँति मृत्यु होने पर अन्य देह की प्राप्ति होती है। स्वरूपज्ञानी धीर पुरुष इससे मोहित नहीं होता।" जैसे कि यह शरीर सदैव परिवर्तित होता रहता है, जैसा कि मैं अपने दैनिक अनुभव से देख सकता हूँ वैसा ही परिवर्तन मृत्यु के समय भी होता है।

डॉ० सिंह—किंतु वैज्ञानिकों के मतानुसार हम यह अंतिम समय का परिवर्तन वस्तुतः देख नहीं सकते।

श्रील प्रभुपाद—उनकी आँखे इतनी अपूर्ण हैं कि वे लोग अनेकानेक वस्तुएँ नहीं देख सकते। उनका अज्ञान श्रीमद्भगवद्गीता को अवैज्ञानिक नहीं बना सकता है। वैज्ञानिक अपने ज्ञान की अपूर्णता को क्यों नहीं स्वीकार कर लेते? उन्हें सर्वप्रथम अपने ज्ञान की अपूर्णता को स्वीकारना चाहिए। उनके देखने की शक्ति यह निर्णय नहीं कर सकती कि क्या विज्ञान और क्या विज्ञान नहीं हैं। कुत्ते प्रकृति के विधान को नहीं समझ सकते। क्या इसका अर्थ यह हुआ कि प्रकृति के विधान अस्तित्व में ही नहीं हैं?

डॉ० सिंह—अच्छा, वैज्ञानिक उस तर्क को स्वीकार कर लेते हैं, [illegible] वे कहते हैं कि पूर्ण वनने का मार्ग इंद्रियजन्य सूचनाओं और अनुभवों [illegible] त होना चाहिए।

श्रील प्रभुपाद—नहीं। पूर्ण [illegible] के द्वारा कभी पूर्ण [illegible]

अपूर्ण हैं।

डॉ० सिंह—श्रील प्रभुपाद, दूसरा प्रश्न भी पूछा जा सकता है। क्या यह संभव नहीं है कि आत्मा, तीन, चार अथवा पाँच शरीर ग्रहण कर ले और फिर मर जाय ?

श्रील प्रभुपाद—आप लाखों शरीरों को स्वीकार करते हैं। मैं कहता हूँ कि आपका कल वाला शरीर आज का शरीर नहीं है। अस्तु, यदि आप सौ वर्ष तक जीवित रहें तो आपने कितनी बार अपने शरीर बदले ? तनिक गणना कीजिए ?

डॉ० सिंह—तेरह।

श्रील प्रभुपाद—तेरह क्यों ?

डॉ० सिंह—औषधि-विज्ञान बताता है कि सभी शारीरिक कोशिका प्रत्येक सात वर्ष पर पूर्णतया परिवर्तित हो जाते हैं।

श्रील प्रभुपाद—नहीं, प्रत्येक सात वर्ष पर नहीं, प्रत्येक क्षण में "रक्त के कण, बदल रहे हैं। क्या ऐसा नहीं है ?

० सिंह—हाँ ठीक है।

श्रील प्रभुपाद—और जैसे ही शरीर के रक्तकण बदलते हैं, आप अपना शरीर बदलते हैं।

डॉ० सिंह—वैज्ञानिक शब्दावली में आत्मा की शाश्वतता को क्या शक्ति के संरक्षण के साथ रखकर उसकी तुलना की जा सकती है ?

श्रील प्रभुपाद—शक्ति के संरक्षण का प्रश्न ही नहीं उठता है, क्योंकि शक्ति सदैव विद्यमान रहती है।

डॉ० सिंह—किंतु वैज्ञानिक शब्दावली के अनुसार शक्ति के संरक्षण का नियम है कि शक्ति न तो निर्मित की जा सकती है, न तो नष्ट की जा सकती। मेरे विचार से इसका अर्थ है शाश्वत।

श्रील प्रभुपाद—ओह, ठीक है, वह हम मानते हैं। श्रीकृष्ण शाश्वत हैं। इसलिए उनकी सारी शक्तियाँ भी शाश्वत हैं।

डॉ० सिंह—क्या यही कारण है कि जीवात्मा भी इसलिए शाश्वत है ?

अपूर्ण हैं ।

डॉ० सिंह—श्रील : भुपाद, दूसरा प्रश्न भी पूछा जा सकता है। क्या यह संभव नहीं है कि आत्मा, तीन, चार अथवा पाँच शरीर ग्रहण कर ले और फिर मर जाय ?

श्रील प्रभुपाद—आप लाखों शरीरों को स्वीकार करते हैं। मैं कहता हूं कि आपका कल वाला शरीर आज का शरीर नहीं है। अस्तु, यदि आप सौ वर्ष तक जीवित रहें तो आपने कितनी बार अपने शरीर बदले ? तनिक गणना कीजिए ?

डॉ० सिंह—तेरह ।

श्रील प्रभुपाद—तेरह क्यों ?

डॉ० सिंह—औषधि-विज्ञान बताता है कि सभी शारीरिक कोशिका प्रत्येक सात वर्ष पर पूर्णतया परिवर्तित हो जाते हैं ।

श्रील प्रभुपाद—नहीं, प्रत्येक सात वर्ष पर नहीं, प्रत्येक क्षण में "रक्त के कण, बदल रहे हैं। क्या ऐसा नहीं है ?

सिंह—हाँ ठीक है ।

प्रभुपाद—और जैसे ही शरीर के रक्तकण बदलते हैं, आप अपना शरीर बदलते हैं ।

डॉ० सिंह—वैज्ञानिक शब्दावली में आत्मा की शाश्वतता को क्या शक्ति के संरक्षण के साथ रखकर उसकी तुलना की जा सकती है ?

श्रील प्रभुपाद—शक्ति के संरक्षण का प्रश्न ही नहीं उठता है, क्योंकि शक्ति सदैव विद्यमान रहती है ।

डॉ० सिंह—किंतु वैज्ञानिक शब्दावली के अनुसार शक्ति के संरक्षण का नियम है कि शक्ति न तो निर्मित की जा सकती है, न तो नष्ट की ...कती। मेरे विचार से इसका अर्थ है शाश्वत ।

श्रील प्रभुपाद—ओह, ठीक है, वह हम मानते हैं। श्रीकृष्ण ... इसलिए उनकी सारी शक्तियाँ भी शाश्वत हैं ।

डॉ० सिंह—क्या यही कारण है कि जीवात्मा भी इस

श्रील प्रभुपाद—हाँ। यदि सूर्य शाश्वत है, तो उसकी शक्तियाँ—उष्णता और प्रकाश भी शाश्वत हैं।

डॉ० सिंह—यह इसी के अनुसार अनुगमन करता है, तब तो वह जीवन न तो बनाया जा सकता है, न तो उसे नष्ट ही किया जा सकता ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, जीवन शाश्वत है। यह न तो विनिर्मित है न इसे नाश ही किया जा सकता हैं। यह अस्थाई रूप से ढका हुआ है। मैं शाश्वत हूँ, किंतु गत रात मैं नींद के द्वारा ढका हुआ था, इसलिए हम कल और आज के रूप में सोचते हैं। भौतिक जगत् की यही दशा है।

प्रत्येक वस्तु आध्यात्मिक

डॉ० सिंह—क्या कृष्णभावनामृत का अभाव ही भौतिक भावना है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ।

डॉ० सिंह—और जब श्रीकृष्णभावनामृत विद्यमान रहता है तब भौतिक प्रकृति कहाँ रहती है ?

श्रील प्रभुपाद—यदि आप श्रीकृष्णभावनामृत में नियमित मग्न रहें तो देखेंगें कि भौतिक कुछ भी नहीं है। जब आप श्रीकृष्ण को एक फल चढ़ाते हैं, तब वह भौतिक नहीं रह जाता। श्रीकृष्ण कोई भौतिक पदार्थ स्वीकार नहीं करेंगे। और इसका यह अर्थ भी नहीं है कि फूल डाल पर भौतिक बना रहता है और जब आप उसे श्रीकृष्ण को चढ़ाते हैं, तब वह आध्यात्मिक बन जाता है। नहीं। फूल केवल तभी तक "भौतिक" रहता है जब तक कि आप सोचते हैं कि यह आपके आनंद-उपभोग के हेतु बनाया गया है। किंतु ज्यों ही आप यह सोचते हैं कि यह श्रीकृष्ण के उपभोग के लिए है, त्योंही आप देखते हैं कि यह अपने यथार्थ रूप में आध्यात्मिक रूप में है।

डॉ० सिंह—इसलिए क्या सम्पूर्ण जगत् ही वास्तव में आध्यात्मिक है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ। इसलिए हम लोग प्रत्येक वस्तु को श्रीकृष्ण की सेवा में लगाना चाहते हैं। वही आध्यात्मिक जगत् है।

डॉ० सिंह—क्या उसी आलोक में हम श्रीकृष्ण के निर्माण की प्रशंसा कर सकते

अपूर्ण हैं।

डॉ० सिंह—श्रील प्रभुपाद, दूसरा प्रश्न भी पूछा जा सकता है। क्या यह संभव नहीं है कि आत्मा, तीन, चार अथवा पाँच शरीर ग्रहण कर ले और फिर मर जाय ?

श्रील प्रभुपाद—आप लाखों शरीरों को स्वीकार करते हैं। मैं कहता हूँ कि आपका कल वाला शरीर आज का शरीर नहीं है। अस्तु, यदि आप सौ वर्ष तक जीवित रहें तो आपने कितनी बार अपने शरीर बदले ? तनिक गणना कीजिए ?

डॉ० सिंह—तेरह।

श्रील प्रभुपाद—तेरह क्यों ?

डॉ० सिंह—औषधि-विज्ञान बताता है कि सभी शारीरिक कोशिका प्रत्येक सात वर्ष पर पूर्णतया परिवर्तित हो जाते हैं।

प्रभुपाद—नहीं, प्रत्येक सात वर्ष पर नहीं, प्रत्येक क्षण में "रक्त के कण, बदल रहे हैं। क्या ऐसा नहीं है ?

डॉ० सिंह—हाँ ठीक है।

श्रील प्रभुपाद—और जैसे ही शरीर के रक्तकण बदलते हैं, आप अपना शरीर बदलते हैं।

डॉ० सिंह—वैज्ञानिक शब्दावली में आत्मा की शाश्वतता को क्या शक्ति के संरक्षण के साथ रखकर उसकी तुलना की जा सकती है ?

श्रील प्रभुपाद—शक्ति के संरक्षण का प्रश्न ही नहीं उठता है, क्योंकि शक्ति सदैव विद्यमान रहती है।

डॉ० सिंह—किंतु वैज्ञानिक शब्दावली के अनुसार शक्ति के संरक्षण का नियम है कि शक्ति न तो निर्मित की जा सकती है, न तो नष्ट की जा सकती। मेरे विचार से इसका अर्थ है शाश्वत।

श्रील प्रभुपाद—ओह, ठीक है, वह हम मानते हैं। श्रीकृष्ण शाश्वत हैं। इसलिए उनकी सारी शक्तियाँ भी शाश्वत हैं।

डॉ० सिंह—क्या यही कारण है कि जीवात्मा भी इसलिए शाश्वत है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ। यदि सूर्य शाश्वत है, तो उसकी शक्तियाँ—उष्णता और प्रकाश भी शाश्वत हैं।

डॉ० सिंह—यह इसी के अनुसार अनुगमन करता है, तब तो वह जीवन न तो बनाया जा सकता है, न तो उसे नष्ट ही किया जा सकता ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, जीवन शाश्वत है। यह न तो विनिर्मित है न इसे नाश ही किया जा सकता हैं। यह अस्थाई रूप से ढका हुआ है। मैं शाश्वत हूँ, किंतु गत रात मैं नींद के द्वारा ढका हुआ था, इसलिए हम कल और आज के रूप में सोचते हैं। भौतिक जगत् की यही दशा है।

प्रत्येक वस्तु आध्यात्मिक

डॉ० सिंह—क्या कृष्णभावनामृत का अभाव ही भौतिक भावना है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ।

डॉ० सिंह—और जब श्रीकृष्णभावनामृत विद्यमान रहता है तब भौतिक प्रकृति कहाँ रहती है ?

श्रील प्रभुपाद—यदि आप श्रीकृष्णभावनामृत में नियमित मग्न रहें तो देखेंगें कि भौतिक कुछ भी नहीं है। जब आप श्रीकृष्ण को एक फल चढ़ाते हैं, तब वह भौतिक नहीं रह जाता। श्रीकृष्ण कोई भौतिक पदार्थ स्वीकार नहीं करेंगे। और इसका यह अर्थ भी नहीं है कि फूल डाल पर भौतिक बना रहता है और जब आप उसे श्रीकृष्ण को चढ़ाते हैं, तब वह आध्यात्मिक बन जाता है। नहीं। फूल केवल तभी तक "भौतिक" रहता है जब तक कि आप सोचते हैं कि यह आपके आनंद-उपभोग के हेतु बनाया गया है। किंतु ज्यों ही आप यह सोचते हैं कि यह श्रीकृष्ण के उपभोग के लिए है, त्योंही आप देखते हैं कि यह अपने यथार्थ रूप में आध्यात्मिक रूप में है।

डॉ० सिंह—इसलिए क्या सम्पूर्ण जगत् ही वास्तव में आध्यात्मिक है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ। इसलिए हम लोग प्रत्येक वस्तु को श्रीकृष्ण की सेवा में लगाना चाहते हैं। वही आध्यात्मिक जगत् है।

डॉ० सिंह—क्या उसी आलोक में हम श्रीकृष्ण के निर्माण की प्रशंसा कर सकते

हैं ? उदाहरणार्थ, क्या हम ऐसा सोच सकते हैं, "यह वृक्ष अत्यंत सुंदर है क्योंकि यह श्रीकृष्ण की संपत्ति है।"

श्रील प्रभुपाद—हाँ। वही कृष्णभावनामृत है।

डॉ० सिंह—यदि कोई व्यक्ति मंदिर में श्रीकृष्ण के अर्चाविग्रह को देखकर सोचता है कि यह तो मात्र पत्थर या लकड़ी है, तो उसका क्या अर्थ होगा ?

श्रील प्रभुपाद—वह यथार्थ से अनभिज्ञ है। अर्चाविग्रह कैसे भौतिक हो सकता है ? पत्थर भी श्रीकृष्ण की शक्ति है। जैसे बिजली की शक्ति सर्वत्र है, किंतु केवल बिजली के विशेषज्ञ ही यह जानते हैं कि उसका उपयोग कैसे किया जाय ? इसलिए श्रीकृष्ण सर्वत्र हैं, यहाँ तक कि पत्थर में भी, किंतु उनके भक्त ही केवल यह जानते हैं पत्थर का प्रयोग कैसे किया जाय कि उससे श्रीकृष्ण की प्रशंसा हो। भक्त जानते हैं कि पत्थर श्रीकृष्ण से अलग रहकर अपना अस्तित्व ही नहीं रख सकता है। अस्तु, जब भक्तगण मूर्ति को देखते हैं, वे कहते हैं "यह श्रीकृष्ण हैं।" भक्तजन श्रीकृष्ण और उनकी शक्ति के वास्तविक एकीकृत रूप को देखते हैं।

साथ ही साथ एक और अनेक

डॉ० सिंह—क्या यह सच है कि श्रीकृष्णभावना युक्त व्यक्ति श्रीकृष्ण को एक सादे पत्थर में उतना ही अनुभव करता हैं जितना पत्थर की मूर्ति में ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ।

डॉ० सिंह—ठीक उतना ही ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, क्यों नहीं ? भगवद्गीता (९.४) में श्रीकृष्ण कहते हैं—

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना।
मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः॥

"मेरी प्राकृत इंद्रियों से अव्यक्त रूप द्वारा यह संपूर्ण जगत् व्याप्त है। संपूर्ण चराचर प्राणी मुझमें स्थित हैं, पर मैं उनमें नहीं हूँ।" इसका अर्थ यह है कि श्रीकृष्ण की शक्ति अर्थात् श्रीकृष्ण अपने आंशिक अभिव्यक्त रूप में विश्व के

प्रत्येक अणु तक व्याप्त हैं। किंतु उनका संपूर्ण अभिव्यक्त व्यक्तिगत स्वरूप मूर्ति में विद्यमान है, जो उनके आदेशानुसार ही गढ़ी गई है। यह अचिन्त्य-भेदाभेद-तत्त्व दर्शन है साथ-ही-साथ श्रीभगवान् और उनकी शक्तियों का एक रूप और उसकी भिन्नता, उदाहरणार्थ, जब धूप आपके कमरे में है। सूर्य और उसकी विलग की गई शक्तियाँ, जैसे गर्मी और प्रकाश गुण की दृष्टि से एक हैं, किंतु मात्रा की दृष्टि से अलग-अलग।

ा० सिंह—किंतु अभी आप कहते हैं कि कोई भी व्यक्ति श्रीकृष्ण को सामान्य पत्थर में खोज सकता है?

ील प्रभुपाद—हाँ, क्यों नहीं? हम पत्थर को श्रीकृष्ण की शक्ति के रूप में देखते हैं।

ा० सिंह—किंतु क्या हम पत्थर के भीतर उनकी पूजा कर सकते हैं?

ील प्रभुपाद—पत्थर में विद्यमान उनकी शक्ति के माध्यम से हम लोग उनकी पूजा कर सकते हैं। किंतु हम लोग पत्थर को ही श्रीकृष्ण मान कर नहीं पूज सकते। हम इस बेंच को श्रीकृष्ण मान कर नहीं पूज सकते। किंतु हम प्रत्येक वस्तु की पूजा कर सकते हैं, क्योंकि हम प्रत्येक वस्तु को श्रीकृष्ण की शक्ति मानते हैं। यह वृक्ष पूजा के योग्य हैं, किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि हम वृक्ष की उसी प्रकार उपासना करें, जैसे मंदिर में श्रीकृष्ण के विग्रह की करते हैं।

अपने बचपन में मैंने अपने माता-पिता से सीखा था कि श्रीकृष्ण की शक्ति को कभी व्यर्थ में नहीं खोना चाहिए। उन्होंने मुझे सिखाया था कि यदि एक चावल का नन्हा-सा दाना भी फर्श के चौखट में फँसा हो तो उसे मैं उठाकर मस्तक से लगाऊँ और उसे नष्ट होने से बचाने के हेतु खा जाऊँ। मुझे पढ़ाया गया था कि मैं प्रत्येक वस्तु को श्रीकृष्ण के परिप्रेक्ष्य में कैसे देखूँ। वही कृष्णभावनामृत है। इसीलिए हम चाहते हैं कि किसी वस्तु को न तो व्यर्थ नष्ट किया जाय न उसका अनुचित उपयोग हो। हम अपने अनुयायियों को यह सिखा रहे हैं कि किस प्रकार प्रत्येक वस्तु का उपयोग श्रीकृष्ण के लिए किया जाय और कैसे यह समझा जाय कि प्रत्येक

हैं ? उदाहरणार्थ, क्या हम ऐसा सोच सकते हैं, "यह वृक्ष अत्यंत सुंदर है क्योंकि यह श्रीकृष्ण की संपत्ति है ।"

श्रील प्रभुपाद—हाँ । वही कृष्णभावनामृत है ।

डॉ० सिंह—यदि कोई व्यक्ति मंदिर में श्रीकृष्ण के अर्चाविग्रह को देखकर सोचता है कि यह तो मात्र पत्थर या लकड़ी है, तो उसका क्या अर्थ होगा ?

श्रील प्रभुपाद—वह यथार्थ से अनभिज्ञ है । अर्चाविग्रह कैसे भौतिक हो सकता है ? पत्थर भी श्रीकृष्ण की शक्ति है । जैसे बिजली की शक्ति सर्वत्र है, किंतु केवल बिजली के विशेषज्ञ ही यह जानते हैं कि उसका उपयोग कैसे किया जाय ? इसलिए श्रीकृष्ण सर्वत्र हैं, यहाँ तक कि पत्थर में भी, किंतु उनके भक्त ही केवल यह जानते हैं पत्थर का प्रयोग कैसे किया जाय कि उससे श्रीकृष्ण की प्रशंसा हो । भक्त जानते हैं कि पत्थर श्रीकृष्ण से अलग रहकर अपना अस्तित्व ही नहीं रख सकता है। अस्तु, जब भक्तगण मूर्ति को देखते हैं, वे कहते हैं "यह श्रीकृष्ण हैं ।" भक्तजन श्रीकृष्ण और उनकी शक्ति के वास्तविक एकीकृत रूप को देखते हैं ।

साथ ही साथ एक और अनेक

डॉ० सिंह—क्या यह सच है कि श्रीकृष्णभावना युक्त व्यक्ति श्रीकृष्ण को एक सादे पत्थर में उतना ही अनुभव करता हैं जितना पत्थर की मूर्ति में ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ ।

डॉ० सिंह—ठीक उतना ही ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, क्यों नहीं ? भगवद्गीता (९.४) में श्रीकृष्ण कहते हैं—

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना ।
मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः ॥

"मेरी प्राकृत इंद्रियों से अव्यक्त रूप द्वारा यह संपूर्ण जगत् व्याप्त है । संपूर्ण चराचर प्राणी मुझमें स्थित हैं, पर मैं उनमें नहीं हूँ ।" इसका अर्थ यह है श्रीकृष्ण की शक्ति अर्थात् श्रीकृष्ण अपने आंशिक अभिव्यक्त रूप में विश्व के

प्रत्येक अणु तक व्याप्त हैं। किंतु उनका संपूर्ण अभिव्यक्त व्यक्तिगत स्वरूप मूर्ति में विद्यमान है, जो उनके आदेशानुसार ही गढ़ी गई है। यह अचिन्त्य-भेदाभेद-तत्त्व दर्शन है साथ-ही-साथ श्रीभगवान् और उनकी शक्तियों का एक रूप और उसकी भिन्नता, उदाहरणार्थ, जब धूप आपके कमरे में है। सूर्य और उसकी विलग की गई शक्तियाँ, जैसे गर्मी और प्रकाश गुण की दृष्टि से एक हैं, किंतु मात्रा की दृष्टि से अलग-अलग।

डॉ० सिंह—किंतु अभी आप कहते हैं कि कोई भी व्यक्ति श्रीकृष्ण को सामान्य पत्थर में खोज सकता है?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, क्यों नहीं? हम पत्थर को श्रीकृष्ण की शक्ति के रूप में देखते हैं।

डॉ० सिंह—किंतु क्या हम पत्थर के भीतर उनकी पूजा कर सकते हैं?

श्रील प्रभुपाद—पत्थर में विद्यमान उनकी शक्ति के माध्यम से हम लोग उनकी पूजा कर सकते हैं। किंतु हम लोग पत्थर को ही श्रीकृष्ण मान कर नहीं पूज सकते। हम इस बेंच को श्रीकृष्ण मान कर नहीं पूज सकते। किंतु हम प्रत्येक वस्तु की पूजा कर सकते हैं, क्योंकि हम प्रत्येक वस्तु को श्रीकृष्ण की शक्ति मानते हैं। यह वृक्ष पूजा के योग्य हैं, किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि हम वृक्ष की उसी प्रकार उपासना करें, जैसे मंदिर में श्रीकृष्ण के विग्रह की करते हैं।

अपने बचपन में मैंने अपने माता-पिता से सीखा था कि श्रीकृष्ण की शक्ति को कभी व्यर्थ में नहीं खोना चाहिए। उन्होंने मुझे सिखाया था कि यदि एक चावल का नन्हा-सा दाना भी फर्श के चौखट में फंसा हो तो उसे मैं उठाकर मस्तक से लगाऊँ और उसे नष्ट होने से बचाने के हेतु खा जाऊँ। मुझे पढ़ाया गया था कि मैं प्रत्येक वस्तु को श्रीकृष्ण के परिप्रेक्ष्य में कैसे देखूं। वही कृष्णभावनामृत है। इसीलिए हम चाहते हैं कि किसी वस्तु को न तो व्यर्थ नष्ट किया जाय न उसका अनुचित उपयोग हो। हम अपने अनुयायियों को यह सिखा रहे हैं कि किस प्रकार प्रत्येक वस्तु का उपयोग श्रीकृष्ण के लिए किया जाय और कैसे यह समझा जाय कि प्रत्येक

वस्तु श्रीकृष्ण हैं। जैसा कि श्रीकृष्ण भगवद्गीता (६.३०) में कहते हैं—

यो मां पश्यति सर्वत्र च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥

"जो मुझे सबमें देखता है और सब कुछ मुझ में स्थित देखता है, उसके लिए मैं कभी अदृश्य नहीं होता, अर्थात् सदा प्राप्त रहता हूँ और वह भी मेरे लिए कभी अदृश्य नहीं होता।

ग्यारहवाँ प्रातःकालीन भ्रमण

१५ मई, १९७३.
चेवियट हिल्स पार्क, लास ऐंजिल्स।

श्रील प्रभुपाद के साथ—डॉ० सिंह और अन्य छात्रगण चल रहे हैं।

पवित्र आत्मा की खोज

डॉ० सिंह—वैज्ञानिक पवित्र आत्मा को देखना वड़ा कठिन समझते हैं। वे कहते हैं कि पवित्र आत्मा का अस्तित्त्व अत्यंत संदिग्ध है।

श्रील प्रभुपाद—उसे वे कैसे देख सकते हैं? वह अत्यंत सूक्ष्म है। उसे देखने की शक्ति किसमें है?

डॉ० सिंह—तिस पर भी वे लोग किसी प्रकार उसे जानना चाहते हैं?

श्रील प्रभुपाद—यदि आप किसी व्यक्ति को अत्यंत घातक विष के एक कण के सौवें भाग का इंजेक्शन दें, वह तत्काल मर जाएगा कोई न तो उस विष को देख सकता है और न उसके प्रभाव को। तथापि वह प्रभाव तो डालता ही है। अस्तु, वैज्ञानिक आत्मा को उसके कार्य द्वारा क्यों नहीं जानते-देखते? ऐसे मामलों में हमें उसके प्रभाव के द्वारा देखना होगा। वेद कहते हैं कि सूक्ष्म अंश, आत्मा के कारण संपूर्ण शरीर सुचारु रूप से कार्य करता है। यदि मैं शरीर में कोई वस्तु चुभाऊँ तो तत्काल मुझे उसका अनुभव होता है, क्योंकि मैं अपने संपूर्ण चर्म के माध्यम से सचेत हूँ। किंतु ज्योंही आत्मा मेरे शरीर से बाहर निकल जाती है, जब मेरा शरीर मरता है, आप उसी

चर्म को काट कर टुकड़े-टुकड़े कर सकते हैं और कोई विरोध नहीं करेगा। यह छोटी सी बात समझना क्यों इतना कठिन है ? क्या यह शक्ति को अलग करना नहीं है ?

डॉ० सिंह—इस प्रकार हम आत्मा को अलग कर सकते हैं, किंतु श्रीभगवान् के बारे में क्या होगा ?

श्रील प्रभुपाद—सर्वप्रथम हमें आत्मा को समझना चाहिए। आत्मा परमात्मा का नमूना है। यदि आप नमूने को समझ सकते हैं, तब आप पूर्ण को भी समझ सकेंगे।

आधुनिक विज्ञान : सहायक अथवा हानिकर

डॉ० सिंह—वैज्ञानिक जीव उत्पन्न करने की प्रक्रिया में प्रयत्नशील हैं।

श्रील प्रभुपाद—"प्रक्रिया में" ! "प्रयत्नशील" ! ये शब्द हम ठुकरा देते हैं। हम स्वीकार नहीं करते। एक भिखारी कहता है, "मैं एक मिल मालिक बनने का प्रयत्न कर रहा हूँ।" हम कहते हैं, "जब तुम मिल मालिक बन जाना तब बातें करना।" इस समय तुम एक दीन भिखारी हो, बस।" वैज्ञानिक कहते हैं कि वे प्रयत्न कर रहे हैं, किंतु मानलो मैं तुमसे पूछूं, "तुम क्या हो ?" क्या तुम कहोगे, "मैं बनने का प्रयत्न कर रहा हूँ।" इस समय तुम क्या हो ? यही प्रश्न है। "हम प्रयत्न कर रहे हैं" यह उचित उत्तर नहीं है, तब वैज्ञानिक प्रस्तावना के बारे में क्या कहा जाय।

डॉ० सिंह—अच्छा, यद्यपि वे अभी तक जीव पैदा करने में समर्थ नहीं हुए हैं, किंतु वे कहते हैं कि शीघ्र वे सक्षम हो जायेंगे।

श्रील प्रभुपाद—कोई दुष्ट वैसा कह सकता है। यदि आप कहते हैं, "भविष्य में कुछ अद्भुत कार्य करने में सफल हो जाऊँगा।" मैं आपका विश्वास क्यों करूँ ?

डॉ० सिंह—अच्छा, वैज्ञानिक कहते हैं कि भूतकाल में उन्होंने बहुत कुछ किया है और भविष्य में वे और अधिक काम पूरा करेंगे।

श्रील प्रभुपाद—भूतकाल में मृत्यु विद्यमान थी, और आज भी लोग मर रहे हैं। इसलिए वैज्ञानिकों ने क्या किया है ?

डॉ० सिंह—उन्होंने लोगों को सहायता पहुँचायी है।

श्रील प्रभुपाद—वैज्ञानिकों ने जीवन की अवधि कम करने में लोगों की सहायता की है। पहले मनुष्य एक सौ वर्ष जीते थे, आजकल साठ-सत्तर वर्ष से अधिक किंचित ही वे जीते हैं और वैज्ञानिकों ने अणुशक्ति का अनुसंधान किया हैं, अब वे लाखों लोगों को मार सकते हैं। इसलिए उन्होंने केवल मरने में सहायता पहुँचाई है। उन्होंने जीवित रहने में सहायता नहीं पहुँचाई है और तिस पर भी वे यह घोषित करने का साहस करते हैं कि वे जीव को जन्म देंगे।

डॉ० सिंह—किंतु अब हमारे पास वायुयान हैं और...

श्रील प्रभुपाद—वैज्ञानिक मृत्यु को रोक नहीं सकते, वे जन्म को रोक नहीं सकते और वे लोग बुढ़ापे को भी नहीं रोक सकते हैं। अस्तु, उन्होंने क्या किया है ? पहले लोग कभी-कभी बूढ़े हुआ करते थे और आजकल लोग आए दिन समय से पूर्व ही बूढ़े हो जाते हैं। पहले लोग कभी-कभी बीमार पड़ते थे और आजकल लोग आए दिन बीमार होते रहते हैं। आजकल अधिक औषधियाँ हैं और अधिक रोग। इसलिए उन्होंने क्या किया है ? वैज्ञानिकों ने संसार की स्थिति में कोई सुधार नहीं किया है। हम लोग उन सभी दुष्ट वैज्ञानिकों को चुनौती देने जा रहे हैं—जो कहते हैं कि जीवन पदार्थ में से विकसित हुआ है। तथ्य यह है कि पदार्थ जीव में से विकसित हुआ है।

विकास की भ्रांति

श्रील प्रभुपाद—विज्ञान कब तक लोगों को ठगता रहेगा ? एक सौ वर्ष, दो सौ वर्ष ? वे लोग सदैव नहीं ठग सकते।

डॉ० सिंह—स्मरणातीत काल से ठगी चलती आई है, इसलिए किंचित वे सोचते हैं कि वे इसे सदा के लिए जारी रखेंगे।

श्रील प्रभुपाद—स्मरणातीत समय से नहीं, विज्ञान लोगों को केवल गत दो अथवा तीन सौ वर्षों से ठग रहा है, उससे पूर्व से नहीं।

डॉ० सिंह—ओह, सचमुच ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, गत दो सौ वर्षों से वे लोग उपदेश देते आ रहे हैं कि जीवन पदार्थ से उत्पन्न होता है—हजारों वर्षों से नहीं। और ठगी आगामी पचास वर्षों में समाप्त हो जायेगी।

डॉ० सिंह—हाँ, आजकल तथाकथित बुद्धिवादी विरोधी आंदोलन चल रहा है। लोग विज्ञान और आधुनिक प्रगति के विरुद्ध विद्रोह कर रहे हैं।

श्रील प्रभुपाद—और वह विज्ञान क्या है ? यह विज्ञान नहीं है। यह अज्ञान है अज्ञान विज्ञान के स्थान पर चल रहा है और अधर्म धर्म के स्थान पर बढ़ रहा है। किंतु यह ठगी अधिक दिनों तक नहीं चल सकती, क्योंकि कुछ लोग बुद्धिमान हो रहे हैं।

डॉ० सिंह—न्यूजवीक, संयुक्त राज्य अमेरिका की एक बड़ी से बड़ी पत्रिका में ईसाई धर्म के ह्रास के संबंध में एक लेख था। उस लेख में एक व्यंग्य चित्र (कार्टून) था जिसमें दिखाया गया था कि एक पिशाच भूकम्प पैदा कर रहा है। अभी हाल में दक्षिण अमेरिका में एक बड़ा भूकम्प आया था, जिसमें कई सहस्र लोगों के प्राण गए। व्यंग्य-चित्र (कार्टून) ने ऐसी वस्तुओं का श्रेय भूत को दिया था, और उस भूत के ठीक दाहिनी ओर रिचर्ड निक्सन को ईसामसीह के एक समर्पित अनुयायी के रूप में दिखाया गया था जो दक्षिण पूर्व एशिया पर बम बरसा रहे थे। इस व्यंग्य-चित्र में भूत ने घूमकर रिचर्ड निक्सन से कहा, "ईसाइयों के साथ रहना नरक के समान है।"

श्रील प्रभुपाद—हाँ, लोग उसी प्रकार आलोचना करेंगे। लोग उन्नत हो रहे हैं। कब तक लोग तथाकथित विज्ञान और तथाकथित धर्म के द्वारा ठगे जायेंगे ? यदि श्री निक्सन अपने देश के मनुष्यों से प्रेम करते हैं तो वे अपने देश की गायों से प्रेम क्यों नहीं करते ? वे भी उसी भूमि पर पैदा हुई हैं और उन्हें भी वहाँ रहने का उतना ही अधिकार है। वे क्यों मारी जाती है ? "तुम्हें

वध नहीं करना चाहिए।" किंतु पशु मारे जाते हैं। यह अपूर्णता है। श्रीकृष्ण दोनों को गले लगाते हैं—गायों को भी और राधारानी को भी। यह पूर्णता है। यहाँ तक कि श्रीकृष्ण पक्षियों से बातें करते हैं। एक दिन यमुना नदी के तट पर वे एक चिड़िया के साथ बातें कर रहे थे, क्योंकि वे पक्षी की भाषा भी बोलते हैं। एक बूढ़ी स्त्री ने यह देखा और वह आश्चर्य चकित हो उठी। "ओह, वे एक पक्षी के साथ बातें कर रहे हैं।"

डॉ० सिंह—आपका तात्पर्य यह है कि वे उसी प्रकार बातें कर रहे थे जैसे चिड़ियाँ बोलती हैं ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ। वेदों में श्रीकृष्ण के गुणों के वर्णन में एक विशेषता यह भी है कि वे कोई भी भाषा बोल सकते हैं। वे सभी जीवात्माओं के पिता हैं, और पिता अपने बच्चों की भाषा समझ सकता है।

श्रीकृष्ण सर्वश्रेष्ठ रसज्ञ हैं। यथार्थतः जो लोग श्रीकृष्णभावना में लीन हैं, के अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति वास्तविक ज्ञान नहीं पा सकता, न तो कोई आनंद ले सकता है। मनुष्य सामान्यतः दुख झेलता है, किंतु वह सोचता है कि वह दुख आनंद है। इसे माया कहते हैं, या भ्रम, अमेरिका में लोग दिन-रात कठिन परिश्रम करते हैं, और वे सोचते हैं, "मैं आनंद ले रहा हूँ।" यह माया है। बँधी हुई आत्मा किसी वस्तु का आनंद नहीं ले सकती वह केवल दुख झेलती है, किंतु वह सोचती है कि मैं आनंद ले रही हूँ।

इसलिए, श्रीमद्भागवत में बद्ध आत्मा की ऊँट के साथ तुलना की गई है। ऊँट कटीली झाड़ियाँ खाने का बड़ा शौकीन है, जो उसकी जीभ को काटती है। जब वह उन्हें खाता है, उसकी जीभ में से रक्त प्रवाहित होता है और वह कटीली झाड़ियों के साथ मिल जाता है। वे तनिक स्वादिष्ट बन जाती हैं और वह सोचता है, "ओह ये टहनियाँ बड़ी अच्छी हैं।" यही माया है। माया अर्थ है, "वह जो नहीं है।" मा का अर्थ है "नहीं" और या का अर्थ है "यह"। इसलिए माया का अर्थ है, "यह

भ्रम की यही व्याख्या है। वैज्ञानिक माया में हैं, क्योंकि वे सोचते हैं ि
वे लोग जगत् का सुधार कर रहे हैं और इससे वे प्रसन्न होते हैं। कि
यह संसार अपनी सारी वस्तुओं के साथ अंत में समाप्त हो जायगा क्यों
यह माया है, यह वह नहीं है, जो हम इसे समझते हैं। जैसा कि श्रीमद्भागव
व्याख्या करती है, भौतिकतावादी सोचते हैं कि वे विजयी हो रहे हैं, कि
यथार्थ में वे पराजित हो रहे हैं।

बारहवाँ प्रातःकालीन भ्रमण

११ मई, १९७३.

कुहासा भरा प्रभात, चेवियट हिल्स लॉस ऐंजिल्स।

श्रील प्रभुपाद के साथ हैं—डॉ० सिंह, कर्णधार दास अधिकारी, कृष्ण कान्ति दास अधिकारी और अन्य छात्रगण।

योगिक शस्त्र

श्रील प्रभुपाद—इस कुहरे को हटाने की शक्ति आप में नहीं है। वैज्ञानिक वाग्चातुर्य से केवल इसकी यह कहकर व्याख्या करते हैं कि इसमें कतिपय विशेष रसायन हैं। वे हँसते हैं, किंतु उनके पास शक्ति नहीं है कि वे इसे हटा सकें।

डॉ० सिंह—उनके पास यह व्याख्या अवश्य है कि कुहरा कैसे बनता है।

श्रील प्रभुपाद—वह व्याख्या उनके पास होगी, और मेरे पास भी वह हो सकती है, किंतु वह बड़े महत्त्व की बात नहीं है। सचमुच यदि आपको यह ज्ञात है कि कुहरा कैसे बनता है तो आपको यह भी ज्ञात होना चाहिए कि इसको विफल कैसे बनाया जाय।

डॉ० सिंह—हमें ज्ञात है कि यह कैसे बनता है।

श्रील प्रभुपाद—तब पता लगाओ कि इसको विफल कैसे बनाया जाय। पहले वैदिक काल की युद्ध की स्थिति में आणविक ब्रह्मास्त्र प्रयुक्त होता था और उसको विफल बनाने के हेतु विरोधी सेना को एक ऐसे शस्त्र का प्रयोग

करना पड़ता, जो इसको पानी में बदल देता। किंतु आज वैसा विज्ञान कहाँ है?

डॉ० सिंह—कुहरा कुछ-कुछ दूध की भाँति एक पदार्थ है। दूध श्वेत दिखाई देता है, किंतु सचमुच यह "कोलाइडल सस्पेंशन ऑफ सरटेन प्रोटीन मोलेक्यूल्स" है, उसी प्रकार कुहरा पानी का कोलाइडल स्थगन स्वरूप है।

श्रील प्रभुपाद—इसलिए यदि आप किसी प्रकार की अग्नि पैदा करें, तो कुहरा तत्काल भगाया जा सकता है, जल अग्नि के द्वारा दूर किया जा सकता है। किंतु वह आप नहीं कर सकते। यदि आप एक बम विस्फोट करते तो उससे गर्मी पैदा होती और सब कुहरा नष्ट हो जाता।

कर्णधार—वह बम विस्फोट सारे नगर को हानि पहुँचा सकता है।

श्रील प्रभुपाद—प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि अग्नि पानी को विफल बना सकती है, किंतु आप बिना लोगों को मारे और संपत्ति की हानि किए कुहरे को भगा नहीं सकते। किंतु प्रकृति के द्वारा, जैसे ही सूर्य उगता है, कुहरा अदृश्य हो जाता है। सूर्य की शक्ति आपकी शक्ति से बढ़कर है। अस्तु, आपको स्वीकार करना होगा कि एक अचिन्त्य शक्ति विद्यमान है।

भगवान् के लक्षण

श्रील प्रभुपाद—अचिन्त्य शक्ति के सिद्धांत को बिना मान्य किए कोई भी व्यक्ति श्रीभगवान् को समझ नहीं सकता। श्रीभगवान् इतने सस्ते नहीं हैं कि कोई भी तथाकथित योगी श्रीभगवान् बन जाय। ऐसे कृत्रिम देवता दुष्टों और मूर्खों के लिए होते हैं। जो लोग बुद्धिमान हैं, वे परीक्षा करके देखेंगे कि तथाकथित योगी के पास कल्पनातीत शक्ति है अथवा नहीं। हम श्रीकृष्ण को भगवान् के रूप में स्वीकार करते हैं, क्योंकि उन्होंने अपनी कल्पनातीत शक्ति का प्रदर्शन किया है। बालक के रूप में श्रीकृष्ण ने एक बड़ी पहाड़ी गोवर्धन को उठा लिया और श्रीकृष्ण के अवतार भगवान् राम ने बिना खंभे के सहारे पानी पर तैरते हुए पत्थरों से एक पुल का निर्माण किया। इसलिए व्यक्ति को चाहिए कि वह किसी को सरलता से भगवान् स्वीकार न करे।

आजकल कोई दुष्ट आता है और कहता है, "मैं भगवान् का अवतार हूँ।" और दूसरा दुष्ट उसे स्वीकार करता है। किंतु भगवान् राम और भगवान् श्रीकृष्ण ने अपनी अचिन्त्य शक्तियों का प्रदर्शन किया था। कभी-कभी लोग उनकी [राम और श्रीकृष्ण की] गतिविधियों के वर्णन को मात्र कहानियाँ अथवा पौराणिक कथा कहते हैं। किंतु ये साहित्य वाल्मीकि व्यासदेव और अन्य आचार्यों द्वारा रचे गए थे, जो सभी महान् एवं उच्चकोटि के विद्वान् सन्त थे। ये महान् सन्त पौराणिक गल्प रचने में अपना समय क्यों नष्ट करते? उन्होंने कभी नहीं कहा कि श्रीराम और भगवान् श्रीकृष्ण संबंधी बातें पौराणिक गल्प हैं। उन्होंने उन गतिविधियों को यथार्थ सत्य माना था। उदाहरणार्थ श्रीमद्भागवत के दशम् स्कंध में व्यासदेव वृन्दावन के जंगल में लगी एक अग्नि के बारे में बतलाते हैं। श्रीकृष्ण के सभी ग्वाल मित्र उद्विग्न होकर सहायतार्थ श्रीकृष्ण की ओर देखने लगे। श्रीकृष्ण ने सारी अग्नि आत्मसात कर ली। यह कल्पनातीत योगज़न्य शक्ति है। वे भगवान् हैं। चूंकि हम लोग भगवान् अथवा श्रीकृष्ण के लघु नमूने हैं, इसलिए हमारे शरीर के भीतर अचित्य योगिक शक्ति है, किंतु बहुत अल्प मात्रा में वह विद्यमान है।

वैज्ञानिक ज्ञान श्रीकृष्ण से आता है

कृष्णकांति—डॉक्टर लोग मानव-मस्तिष्क की गूढ़ प्रकृति से आश्चर्यचकित हैं।

श्रील प्रभुपाद—ठीक है, किंतु मस्तिष्क के कारण शरीर कार्य नहीं करता, वह जीवात्मा है जिसके संकेत पर शरीर कार्य करता है। क्या एक कम्पयूटर स्वतः कार्य करता है? नहीं, एक व्यक्ति इसे चलाता है। वह बटन दबाता है, तब कुछ होता है। अन्यथा मशीन का क्या मूल्य है? मशीन को सहस्रों वर्षों तक रख सकते हैं, किंतु यह तब तक कार्य नहीं करेगी, जब तक कि एक व्यक्ति आकर उसका बटन न दबाये। किंतु कौन काम कर रहा है? मशीन या मनुष्य? उसी प्रकार मानव-मस्तिष्क भी एक मशीन है और वह परमात्मा के निर्देशानुसार कार्य कर रहा है, जो प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में

भगवान् के अंश के रूप में स्थित हैं।

वैज्ञानिकों को चाहिए कि वे भगवान् और योग की शक्ति को स्वीकार कर लें। यदि वे ऐसा नहीं करते हैं तो मूर्ख समझे जायेंगे। दिव्य ज्ञान के बल पर हम अनेक बड़े वैज्ञानिकों एवं दार्शनिको को सीधे चुनौती दे रहे हैं। पिछले दिन आप उस रसायन शास्त्री को लाए थे, और मैंने उससे कहा था, "आप मूर्ख हैं।" किंतु वह क्रोधित नहीं हुआ। उसने इसे स्वीकार किया और मैंने उसके सभी तर्कों को पराजित कर दिया। शायद आपको स्मरण हो।

डॉ० सिंह—हाँ। वस्तुतः उसने इस बात को स्वीकार किया कि संभवतः उसके प्रयोग के लिए विधि संबंधी आवश्यक बातों का ज्ञान उसे श्रीकृष्ण नहीं दिया था।

श्रील प्रभुपाद—वह श्रीकृष्ण के विरुद्ध है, तब श्रीकृष्ण उसे किसी प्रकार की सुविधा क्यों देंगे? यदि आप श्रीकृष्ण के विरुद्ध हैं और श्रीकृष्ण के विना ही महत्त्व चाहते हैं, तब आप असफल हो जायेंगे। सर्वप्रथम आप पूर्णतः समर्पित बनें, तब श्रीकृष्ण आपको सभी सुविधाएं देंगे। हम लोग किसी भी वैज्ञानिक अथवा दार्शनिक का सामना करने का साहस रखते हैं और उसे चुनौती देते हैं। कैसे? श्रीकृष्ण के बल पर। मुझको ज्ञात है कि जब मैं उनके साथ बातें करूँगा, तब श्रीकृष्ण उन्हें पराजित करने के हेतु मुझको आवश्यक बुद्धि प्रदान करेंगे। अन्यथा वैज्ञानिक योग्यता की दृष्टि से वे लोग हमारी अपेक्षा अत्यंत अधिक योग्य हैं। हम उनके सम्मुख एक सामान्य व्यक्ति के समान हैं। किंतु हम लोग श्रीकृष्ण को जानते हैं और श्रीकृष्ण सर्वज्ञ हैं। अस्तु हम किसी भी वैज्ञानिक को चुनौती दे सकते हैं जैसे एक छोटा बच्चा एक बहुत बड़े व्यक्ति को चुनौती दे सकता है, क्योंकि वह जानता है कि, "मेरे पिताजी यहाँ हैं।" वह अपने पिता का हाथ कस कर पकड़े रहता है, जो उसे यह विश्वास दिलाता है कि कोई व्यक्ति उसको हानि नहीं पहुँचा सकता है।

डॉ० सिंह—जो लोग श्रीकृष्णभावनामृत को समझने का प्रयत्न नहीं करते क्या उनका मानव रूपी जीवन नष्ट हो जाता है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ। जो लोग भगवान् के साथ अपने संबंध को समझने का प्रयत्न नहीं करते, वे सामान्यतः एक पशु की भाँति मरते हैं—कुत्ते और बिल्ली की भाँति। उनका जन्म होता है, खाते हैं, सोते हैं, बच्चे पैदा करते हैं और मर जाते हैं। यही उनके मानव जीवन का कुल जोड है। ये दुष्ट सोचते हैं, "मैं यह शरीर हूँ।" उन्हें आत्मा के बारे में कोई ज्ञान नहीं है। आत्मा का अर्थ है स्वयं अथवा व्यक्तिगत आत्मा। श्रीमद्भागवत और भगवद्गीता आत्मा के संबंध में हमें ज्ञान देते हैं, किंतु लोग उसके बारे में अज्ञात हैं।

मानव समाज के हेतु वैदिक साहित्य में दिए गए ज्ञान से लोग अनभिज्ञ हैं। उदाहरणार्थ वेद हमें सूचित करते हैं कि गाय का गोबर पवित्र है। यहाँ अमेरिका में विशेषतः लोग अपने कुत्ते को मलत्याग कराने के लिए सड़कों पर लाते हैं। निश्चय ही कुत्ते का मल अत्यंत अपवित्र है—इसमें कीटाणु शीघ्रता से बढ़ते हैं। किंतु लोग इतने दुष्ट हैं कि वे इसका कोई विचार ही नहीं करते। उल्टे वे लोग कुत्ते का मल चारों ओर फैलाते हैं। किंतु गाय का गोबर यहाँ कहीं देखते को नहीं मिलता है, यद्यपि वेद कहते है कि गाय का गोबर पवित्र है। यह एक लक्षण है: "कूड़ा कर्कट फेंकना नियम विरुद्ध।" किंतु कुत्ते को मलत्याग की अनुमति है। तनिक देखो लोग कितने मूर्ख हैं। जहाँ घास पर एक टुकड़ा कागज गिराना विधि-निषिद्ध है, किंतु वहीं तुम्हारे कुत्ते को अपना मल सर्वत्र बिखेरने देंगे, यद्यपि यह मल फैलने वाले कीटाणुओं से भरा हुआ है।

अंतरिक्ष कार्यक्रम

समय और धन का बचकाना विनाश

डॉ० सिंह—जब व्योमयात्री चंद्रमा के ऊपर से पृथ्वी के धरातल पर लौटे तब अंतरिक्ष कार्यक्रम में संलग्न वैज्ञानिक बड़े सावधान थे। उन्होंने सोचा कि ये अंतरिक्ष यात्री संभव है कोई अब तक अज्ञात कीटाणु अपने साथ लाए हों

इसलिए वैज्ञानिकों ने उन अंतरिक्ष यात्रियों को कई दिनों तक संगरोध (quarantine) के अंतर्गत रखा कि वे निश्चित हो सकें।

श्रील प्रभुपाद—सर्वप्रथम यह पता लगाओ कि वे अंतरिक्ष यात्री चंद्रमा के ऊपर गए थे कि नहीं। मुझे उतना विश्वास नहीं है, सोलह वर्ष पूर्व जब मैंने लिखा, "अन्य ग्रहों की सरल यात्रा" तो उसमें मैंने संकेत किया था कि वैज्ञानिक बाहरी अंतरिक्ष का पता लगाने में बच्चों जैसा प्रयास कर रहे हैं और उन्हें कभी सफलता नहीं मिलेगी। अनेक वर्षों के उपरांत जब मैंने सैन्फ्रांसिस्को की यात्रा की, एक प्रेस रिपोर्टर ने मुझसे पूछा, "चंद्रमा के शोध अभियान के संबंध में आपके क्या विचार हैं?" मैंने उसे बताया, "यह केवल समय और धन का विनाश है, बस यही।"

कृष्णकांत—अंतरिक्ष कार्यक्रम में अभी हाल में ही एक और असफलता मिली है।

श्रील प्रभुपाद—वह तो सदैव हो ही रही है। क्या था वह?

कृष्णकांत—इन्होंने पृथ्वी की परिक्रमा करने और एक प्रकार से अंतरिक्ष की एक चौकी के रूप में कार्य करने के हेतु एक अंतरिक्ष यान भेजा था, किंतु वह असफल हो गया। इस पर दो अरब डालर खर्च हुए थे।

श्रील प्रभुपाद—वे लोग इस प्रकार समय और धन क्यों नष्ट कर रहे हैं?

कृष्णकांत—समाचार-पत्रों में उनकी आलोचना हुई थी।

श्रील प्रभुपाद—वे लोग सामान्यतः बचपना कर रहे हैं, वे मूर्ख हैं। उन्होंने इतने दिनों में क्या प्राप्त किया है? कितने वर्षों से वे लोग चंद्रमा पर जाने की तैयारी कर रहे हैं?

डॉ० सिंह—दस वर्षों से अधिक हुए। रूस ने १९५७ में अपने स्पुतनिक के साथ प्रारंभ किया।

श्रील प्रभुपाद—किंतु वे लोग उससे कई वर्ष पूर्व से ही प्रयत्नशील थे। इसलिए कहिए कि गत पच्चीस वर्षों से वे प्रयत्न कर रहे हैं। उन्होंने धूल के अतिरिक्त कुछ नहीं पाया, परंतु वे अभी भी प्रयत्न कर रहे हैं। कितने हठी हैं। अंतरिक्ष कार्यक्रम कभी सफल नहीं होगा।

डॉ० सिंह—उनका कहना है कि भविष्य में वे लोग मंगल ग्रह के धरातल पर

जाना चाहते हैं।

श्रील प्रभुपाद—वे सब अपने भविष्य के कार्यक्रम की घोषणा करके "बड़े आदमी" बन रहे हैं।

डॉ० सिंह—वे कहते हैं कि यह सब लगभग दस वर्ष में पूरा होगा।

श्रील प्रभुपाद—यदि वे एक वर्ष कहें तो क्या? वे दस वर्ष या एक वर्ष कह सकते हैं, किंतु हम लोग ऐसी प्रस्तावना को स्वीकार नहीं कर सकते। हम यह देखना चाहते हैं कि सम्प्रति वे क्या कर रहे हैं।

डॉ० सिंह—वे लोग छोटे आकार के नमूनों के प्रयोग द्वारा अपनी तकनीक को विकसित कर रहे हैं।

श्रील प्रभुपाद—वे सामान्यतः बचपना करते हैं। अपने बचपन में देखता था कि ट्रामगाड़ी लोहे की पटरियों के साथ चलती है। एक बार मैंने सोचा, "मैं एक छड़ी लूँगा और उससे बिजली के तार को छूऊँगा, और मैं भी पटरियों पर चलने लगूँगा। वैज्ञानिक अपनी सारी योजना के साथ ठीक वैसे ही बचपना करते हैं। वे लोग इतना अधिक समय और धन खर्च करते हैं, किंतु उनका आशय क्या है? उनका प्रयत्न निराशापूर्ण है, क्योंकि वे लोग वस्तुतः जीवन का उद्देश्य नहीं समझते। वैज्ञानिक लोग बहुत बड़ी राशि खर्च कर रहे हैं और राजनीतिज्ञ उनकी आर्थिक सहायता कर रहे हैं, किंतु फल शून्य के बराबर है। वे लोग उस डॉक्टर की भाँति हैं, जो किसी रोग विशेष को ठीक-ठीक नहीं समझ पाता है तथापि वह अपने रोगी को कहता है, "ठीक है, पहले तुम यह गोली खा कर देखो, यदि वह प्रभावी नहीं सिद्ध होती, तो यह दूसरी गोली खाना।" डाक्टर यह कभी भी स्वीकार नहीं करेगा कि वह इस रोग का निदान नहीं जानता। वैज्ञानिक सामान्यतः लोगों को ठग रहे हैं और धोखा दे रहे हैं। वे लोग जो यथार्थपूर्ण समस्याओं—जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा और रोग का निराकरण नहीं कर सकते हैं और इसलिए उनके सभी कार्य-क्रम "यूटोपियन-प्लेटफार्म" काल्पनिक उड़ान पर हैं, जिसको संस्कृत में "आकाश कुसुम" कहते हैं। आकाश पुष्प का अर्थ है वह फूल जो आकाश से आया हो। बाह्य अंतरिक्ष की खोज द्वारा सत्य की शोध में किये जाने

वाले उनके सारे प्रयत्न आकाश से एक फूल तोड़ने के जैसे ही हैं।

दूसरा उदाहरण यह है, कि वैज्ञानिक मूर्ख बत्तखों की भांति कार्य करते हैं। भारत में हम लोग कभी-कभी देख सकते हैं कि एक बत्तख सारे दिन बैल के पीछे-पीछे चलती है। बत्तख सोचती है कि बैल के अंडकोश मछली हैं। भारतवर्ष में यह एक सामान्य दृश्य है। बैल चलता रहता है और बत्तख उसके पीछे-पीछे उस बड़ी मछली का पीछा करती रहती है और सोचती है, "यह गिरेगा और मैं इसे खाऊँगी।"

तेरहवाँ प्रातःकालीन भ्रमण

२ दिसम्बर, १९७३.
लॉस ऐंजिल्स के निकट प्रशान्त महासागर के तट पर।

श्रील प्रभुपाद के साथ हैं—डॉ० सिंह, हृदयानंद दास गोस्वामी, कृष्णकान्ति दास अधिकारी और अन्य छात्रगण।

भक्त कामनाओं से परे

श्रील प्रभुपाद—आजकल कर्मी, ज्ञानी, योगी और भक्त का अंतर कौन जानता है?

हृदयानंद गोस्वामी—कर्मी स्थूल इंद्रियों का आनंद लेना चहता है, ज्ञानी सूक्ष्म मस्तिष्क का आनंद लेना चाहता है—मानसिक अनुमान लगाने के लिए, और योगी, योग की शक्ति से ब्रह्मांड को प्रभावित करना चाहता है।

श्रील प्रभुपाद—ये सब भौतिक शक्तियाँ हैं।

हृदयानंद गोस्वामी—और भक्त भौतिक कामनाएँ नहीं रखता।

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। और जिस समय तक व्यक्ति सचमुच इच्छा-रहित नहीं होता, उस अवधि तक वह सुखी नहीं हो सकता। कर्मी, ज्ञानी और योगी ये सभी कामनाओं से पूर्ण रहते हैं, इसीलिए वे लोग दुखी रहते हैं। कर्मी सबसे अधिक दुखी रहते हैं, ज्ञानी उससे कुछ कम दुखी रहता है, योगी उससे कुछ कम दुखी रहता है, योगी उससे कुछ उच्च स्तर पर रहता है। किंतु भक्त-उपासक पूर्ण रूपेण सुखी रहता है। कुछ योगियों के पास ऐसी योग की शक्ति

होती है जिससे वे दूसरे देशों में, सहस्त्रों मील दूर वृक्षों से अनार खींच लेते हैं। अन्य योगी बिना वायुयान के उड़ सकते हैं। और कुछ योगी किसी को भी सम्मोहित कर सकते हैं। तब वे किसी व्यक्ति की ओर इंगित करके कहते हैं, "ये भगवान् हैं, और सम्मोहन के वशीभूत लोग उनके उक्त कथन को स्वीकार करते हैं। वस्तुतः मैंने स्वयं ऐसे जादू के मूर्खता पूर्ण कार्य देखे हैं।

कृष्णकान्त—क्या एक पावन भक्त श्रीकृष्ण से बढ़कर दयालु होता है ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ। एक वास्तविक वैष्णव, सच्चा भक्त श्रीकृष्ण से भी बढ़कर कृपालु होता है। उदाहरणार्थ प्रभु ईसामसीह को लीजिए, कहा जाता है कि प्रभु ईसामसीह ने प्रत्येक व्यक्ति के पापों को अपने ऊपर ले लिया था, तिस पर भी उनको सूली पर चढ़ा दिया गया। हम देख सकते हैं कि वे कितने कृपालु थे। आजकल दुष्ट लोग सोचते हैं, "हमें पापपूर्ण गतिविधियाँ करते जाने दें, ईसा ने हमारे लिए दुख उठाने का ठेका ले रखा है।" [बड़ी देर तक गंभीर चितनशील चुप्पी।]

पदार्थ और जीवात्मा का अंतर

सिंह—वैज्ञानिक कहते हैं कि वृक्षों की चेतना और मेरी चेतना में अंतर है। मेरी चेतना अधिक उन्नत है। यदि आप मेरे शरीर में कोई नोकदार वस्तु गड़ाएँ तो तत्काल मैं उसका विरोध करूँगा। परंतु यदि आप किसी वृक्ष को काटें तो वह विरोध नहीं करेगा। वस्तुतः प्रत्येक वस्तु के अंतर्गत चेतना रहती है, इसमें केवल मात्रा का प्रश्न है, चेतना जितनी ही अधिक पदार्थ से ढकी हुई होगी, उतनी ही अधिक वह भौतिक होगी और चेतना उतनी ही अधिक विकसित होगी, वह उतनी ही अधिक आध्यात्मिक होगी। पदार्थ और जीवात्मा में यही अंतर है।

आत्माएँ सर्वत्र विद्यमान हैं। वे भूमि से बाहर निकलने के लिए प्रयत्नशील हैं। घास की ओर संकेत करते हैं जैसे ही उन्हें कोई सुअवसर मिलता है, वे अपनी चेतना को प्रकट करना चाहती हैं। वे आत्माएँ जो उच्च ग्रहों से इस ग्रह पर नीचे उतरती हैं, कभी-कभी वे वर्षा की बूंदों के माध्यम

से नीचे भूमि पर गिर पड़ती हैं। तब वे घास बनती हैं और धीरे-धीरे जीवन की उन्नत दशा की ओर विकसित होती हैं।

डॉ० सिंह—ओह, यह भयंकर है।

श्रील प्रभुपाद—ये सूक्ष्म शक्ति के कार्य व्यापार हैं। इसके बारे में वैज्ञानिक क्या जानते हैं? वस्तुतः उनका ज्ञान माया और उसकी चमक-दमक के द्वारा हर लिया जाता है और वे सोच रहे हैं, "ओह, मैं एक अत्यंत सुशिक्षित विद्वान् हूँ।"

आत्मा का स्थानान्तरण

डॉ० सिंह—श्रील प्रभुपाद जी, हृदय के स्थानान्तरण के संबंध में आप के क्या विचार हैं? हम जानते हैं कि आत्मा हृदय के भीतर ही रहती है। किंतु आजकल डॉक्टर लोग पुराने हृदय के स्थान पर नया हृदय आरोपित कर सकते हैं। हृदय आरोपण की दशा में प्रत्येक हृदय के भीतर रहने वाली आत्मा का क्या होता है? क्या जो व्यक्ति नया हृदय प्राप्त करता है, उसे नूतन व्यक्तित्व भी प्राप्त होता है?

श्रील प्रभुपाद—नहीं।

डॉ० सिंह—क्यों नहीं?

श्रील प्रभुपाद—कल्पना करें कि मैं एक कुर्सी से उठकर दूसरी कुर्सी में बैठता हूँ तो क्या मेरा व्यक्तित्व बदल जाता है? मैं अपना स्थान बदल सकता हूँ, किंतु इसका अर्थ क्या यह हुआ कि मेरी आत्मा बदल गयी है?

डॉ० सिंह—किंतु हृदय बदल गया है और हृदय में ही आत्मा रहती है।

श्रील प्रभुपाद—वेद हृदय को आत्मा के बैठने का स्थान कहते हैं। इसलिए जब डाक्टर हृदयारोपण करते हैं, तब वे लोग साधारणतया आत्मा का स्थान बदल देते हैं। वही आत्मा वहाँ रह जाती है। यदि वैज्ञानिक यह सिद्ध करें कि हृदयारोपण के साथ ही साथ उन्होंने रोगी के जीवन की अवधि को भी बढ़ा दिया है, तब यह सिद्ध हो जायगा कि उन्होंने आत्मा को पकड़ लिया हैं। किंतु जीवन की अवधि को वे बढ़ा नहीं सकते, क्योंकि लोगों ने अपना शरीर एक उच्च सत्ता के पास से प्राप्त किया है। आप यह शरीर लें और

एक निश्चित अवधि तक इसके भीतर ही रहें। यदि आप सामान्यतः अपने शरीर का कोई अंग बदलते हैं तो उससे आप जीवन की अवधि नहीं बढ़ा सकते। वह असंभव है। डाक्टर लोग सोचते हैं कि हृदय बदलने के कारण वे जीवन की अवधि भी बढ़ा देंगे, किंतु वह संभव नहीं है।

डॉ० सिंह—अतः एक हृदयारोपण क्या उसी प्रकार बनावटी ढंग से आत्मा का एक पुराने हृदय से नए में प्रवेश करने जैसा है?

श्रील प्रभुपाद—हाँ, यह कुछ वैसा ही है। श्रीकृष्ण भगवद् गीता (२.१३) में व्याख्या करते हैं—

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति॥

"जिस प्रकार बद्धजीव को इस देह में क्रम से कौमार, यौवन तथा वृद्धावस्था की प्राप्ति होती है, उसी भाँति मृत्यु होने पर अन्य देह की प्राप्ति होती है। स्वरूपज्ञानी धीर पुरुष इससे मोहित नहीं होता।" हृदय को बदलना ठीक वैसा ही है जैसा कि भौतिक शरीर के किसी अंग का बदलना। हृदय जीवन का वास्तविक स्रोत नहीं है अस्तु, हृदय बदलने पर जीवन की अवधि नहीं बढ़ती है।

डॉ० सिंह—हाँ, अधिकांश हृदयारोपण के रोगी, ऑपरेशन के बाद बहुत थोड़े समय तक जीवित रहते हैं। किंतु क्या कभी यह भी संभव हो सकता है कि एक शरीर से दूसरे शरीर में आत्मा का भी आरोपण किया जा सके?

श्रील प्रभुपाद—कभी-कभी विशेष योगीजन वैसा कर सकते हैं वे उत्तम शरीर प्राप्त कर सकते हैं और अपनी आत्मा को उसमें परिवर्तित कर सकते हैं।

डॉ० सिंह—जब डाक्टर लोग हृदयारोपण का कार्य करते हैं, तब वे ऐसे व्यक्ति का हृदय निकालते हैं जो तत्काल मरा है। और इसे किसी दुर्बल के हृदय से बदल देते हैं। क्या मृत के हृदय की आत्मा दुर्बल हृदय के साथ स्थान परिवर्तित करती है?

श्रील प्रभुपाद—नहीं। आत्मा ने मृतक हृदय को पहले ही छोड़ दिया था। उसको

दूसरे हृदय में लाने का प्रश्न ही नहीं उठता।

डॉ० सिंह—मुझे देखने दीजिए कि मैं आपके कहने का अर्थ ठीक-ठीक समझा हूँ। जो व्यक्ति अभी-अभी मरा है, जब डाक्टर उसका हृदय निकालते हैं, तब उसकी आत्मा पहले ही उस हृदय को छोड़ चुकी होती है। जब डाक्टर लोग उस मृत हृदय को रोगी के शरीर में स्थापित करते हैं, तब रोगी की आत्मा नए रोपण किए गए हृदय में चली जाती है।

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। आत्मा की यह नियति है कि वह एक निश्चित समय तक शरीर में रहे। आप अपनी इच्छानुसार उस शरीर के जिस अंग को चाहें, बदल लें, किंतु उस शरीर की आयु की अवधि को आप नहीं बदल सकते।

डॉ० सिंह—अतः हृदय एक मशीन की तरह है—एक यंत्र ?

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। यह आत्मा के बैठने का स्थान है।

सरसों के बोरे में सरसों का एक दाना

डॉ० सिंह—श्रील प्रभुपाद जी, जीव विज्ञान-शास्त्री हमें बतलाते हैं कि ऐसी अनेक योनियाँ हैं जो बिना यौनसम्पर्क के ही बच्चे पैदा कर सकती हैं। क्या वेद इससे सहमत हैं ?

श्रील प्रभुपाद—ओह, हाँ।

डॉ० सिंह—इसलिए क्या हम उनके पुनर्जन्म को रोक नहीं सकते हैं ?

श्रील प्रभुपाद—नहीं। हम कैसे रोकेंगे ? यहाँ अनेक जीवात्माएँ हैं जो इस भौतिक जगत् में जीवन का आनन्द लेने के हेतु आई हैं, इसलिए पुनर्जन्म अवश्यंभावी है। यह भौतिक जगत् एक जेल की भाँति है। जेलों का आप उन्मूलन नहीं कर सकते हैं। जैसे ही एक व्यक्ति जेल से बाहर निकलता है, दूसरा उसके भीतर जाने के लिए तैयार बैठा रहता है। इसी प्रश्न की भगवान् चैतन्य महाप्रभु ने विवेचना की थी। उनके एक भक्त, वासुदेव दत्त ने कहा, "कृपया इस समस्त ब्रह्मांड की जीवात्माओं को लेकर उन्हें सांसारिक बंधनों से मुक्त कर दें और यदि आप सोचते हैं कि वे इतनी अधिक पापपूर्ण हैं कि सुधार नहीं हो सकता, तो उनके सारे पापों को मुझ को दे दें

भगवान् चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "मानो कि मुझको यह सारा ब्रह्मांड और सभी जीवात्माओं को अपने साथ ले जाना है। यह अगणित ब्रह्मांडों में से एक है। यह ठीक उसी प्रकार है जैसे सरसों से भरे बड़े बोरे में सरसों का एक दाना। यदि तुमने उस बोरे में से एक दाना सरसों हटा दिया तो क्या अंतर पड़ेगा?" अस्तु पुनर्जन्म वास्तव में रोका नहीं जा सकता। जीवात्माएँ संख्या में अगणित हैं, इसलिए इसे अवश्य चलना चाहिए।

डॉ० सिंह—आपने कहा है कि यह भौतिक जगत् एक सुधार गृह की भाँति है जहाँ मनुष्य को भौतिक पदार्थों के मोह से छुटकारा पाने और पुनर्जन्म एवं मृत्यु के चक्कर से मुक्ति पाने की शिक्षा दी जाए।

श्रील प्रभुपाद—हाँ। इसलिए आप अवश्य ही श्रीकृष्णभावनामृत का अभ्यास करें।

चौदहवाँ प्रातःकालीन भ्रमण

३ दिसम्बर, १९७३.
लॉस ऐंजिलस के निकट प्रशान्त महासागर के तट पर।

श्रील प्रभुपाद के साथ हैं—डॉ० सिंह, डॉ० डब्ल्यू० एच० उल्फ रोतके और अन्य छात्रगण।

अंतर्ग्रहीय गैसों का उद्‌गम

डॉ० सिंह—वैज्ञानिक कहते हैं कि एक समय था जब पृथ्वी गैसीय पदार्थ पर तैरते हुए धूल के कणों से मिलकर बनी थी। उसके बाद, कालांतर में यह पदार्थ रुककर गाढ़ा बना और उसी ने इस भूमि की रचना की।

श्रील प्रभुपाद—वैसा हो सकता है, किंतु गैस कहाँ से आई ?

डॉ० सिंह—वे कहते हैं कि वह गैस पहले से ही अस्तित्त्व में थी।

श्रील प्रभुपाद—श्रीकृष्ण (भगवद्‌गीता ७.४) में कहते हैं—

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनोबुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा॥

"पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार, ऐसे यह आठ प्रकार से विभाजित मेरी भिन्न (अपरा) प्रकृति हैं।" यहाँ श्रीकृष्ण समझाते हैं कि वायु (गैसें) उनके भीतर से ही निकली है और वायु से भी सूक्ष्म खम् (ईथर) है, और ईथर से सूक्ष्म मन है, मन से सूक्ष्म बुद्धि है, बुद्धि से सूक्ष्म

अहंकार है, और अहंकार से भी सूक्ष्म आत्मा है। किंतु वैज्ञानिक लोग इसे नहीं जानते। वे केवल स्थूल वस्तुओं को जानते हैं। वे गैस की चर्चा करते हैं, परंतु गैस कहाँ से आती है ?

डॉ० सिंह—इसका उत्तर वे नहीं दे सकते हैं।

श्रील प्रभुपाद—परंतु, हम उत्तर दे सकते हैं। श्रीमद्भागवत के माध्यम से हम जानते हैं कि गैस से अथवा ईथर से वे निकली है। ईथर मन से निकला, मन बुद्धि से निकला, बुद्धि अहंकार से उत्पन्न हुई और अहंकार आत्मा से उत्पन्न हुआ है।

डॉ० सिंह—वैज्ञानिक लोग तर्क करते हैं कि डार्विन की "बायोफिजिकल टाइप" विकास होने के पूर्व "प्रीबायोटिक" रसायन शास्त्र अथवा रासायनिक विकास हुआ था।

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। और "रासायनिक-विकास" शब्द का अर्थ है कि रसायन का उद्गम है और उद्गम भावना प्रवृत्ति अथवा जीवन है। नींबू सिट्रिक अम्ल उत्पन्न करता है और हमारा शरीर मूत्र, रक्त और स्राव के माध्यम से अनेक रसायन पैदा करता है। यह प्रमाण है कि जीव रसायन उत्पन्न करता है न कि रसायन से जीव उत्पन्न होता है।

सिंह—वैज्ञानिक कहते हैं कि एक बार जब जीव का बीज रक्तकणों के भीतर अस्तित्व में आ जाता है, तब जीवात्मा स्वतः विकसित होती है और कार्यरत हो जाती है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, किंतु बीज कौन देता है ? भगवद्गीता (७.१०) में श्रीकृष्ण इस प्रश्न का उत्तर देते हैं—

बीजं मां सर्वभूतानां
विद्धि पार्थ सनातनम्।

"हे पार्थ। सब प्राणियों का आदि बीज मुझे ही जान।" और आगे (१४.४) में कहते हैं—

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः संभवन्ति याः ।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥

"हे अर्जुन । सब प्रकार की योनियों में जितने भी शरीर उत्पन्न होते हैं, उन सब की महद्ब्रह्म प्रकृति तो उत्पत्ति का स्थान, अर्थात् माता है और मैं बीज का गर्भाधान करने वाला पिता हूँ ।"

आदि स्रष्टा को महत्त्व देना

डॉ० उल्फ रोत्तके—श्रील प्रभुपाद जी, सारी विनम्रता के उपरांत मान लीजिए कि वैज्ञानिक सचमुच यदि अप्राकृतिक ढंग से एक जीवाणु उत्पन्न करने में सफल हो गए । तब आप उसे क्या कहेंगे ?

श्रील प्रभुपाद—उनका महत्त्व क्या होगा ? जो पहले से ही प्रकृति के अंतर्गत विद्यमान हैं, वे लोग उसी का अनुकरण करेंगे । लोग अनुकरण करने के बड़े शौकीन हैं । "नाइट क्लब" में यदि एक व्यक्ति कुत्ते की नकल करता है तो उसे देखने के लिए लोग धन देकर जायेंगे । किंतु जब लोग वास्तविक कुत्ते को भूंकते हुए देखते हैं, तब उस पर कोई ध्यान नहीं देते ।

डॉ० सिंह—श्रील प्रभुपाद जी, रासायनिक विकास का विचार १९२० में एक रूसी जीव-विज्ञान-शास्त्री के ध्यान में आया। उसने प्रदर्शित किया कि "बायोकेमिकल विकास" के पूर्व पृथ्वी का वातावरण क्षरण की स्थिति में था । दूसरे शब्दों में यह प्रायः उद्जन (हायड्रोजन) से भरा हुआ था, प्राण वायु (ऑक्सीजन) अत्यंत कम थी । तब कालांतर में सूर्य के विकिरण ने इन उद्जन अणुओं को विभिन्न रसायनों के रूप में उत्पन्न किया ।

श्रील प्रभुपाद—यह एकांगी अध्ययन है । सर्वप्रथम यह बताइए कि हायड्रोजन कहाँ से आया ? साधारणतः वैज्ञानिक, प्रक्रिया के केवल मध्य भाग से अध्ययन प्रारंभ करते हैं । वे लोग मूल का अध्ययन नहीं करते । हमें वस्तु का प्रारंभ अवश्य जानना चाहिए । यह एक वायुयान है । (क्षितिज पर दिखाई देने वाले एक वायुयान की ओर इंगित करते हैं । क्या आप कह सकते हैं कि उस मशीन का उद्गम स्थल सागर है ? एक मूर्ख व्यक्ति कह सकता है कि

अचानक एक प्रकाश सागर में दिखाई पड़ा और इसी प्रकार वायुयान बनाया गया। किंतु क्या यह एक वैज्ञानिक व्याख्या है ? वैज्ञानिकों की व्याख्याएँ इसी प्रकार की हैं, वे लोग कहते हैं, "यह अस्तित्व में था, फिर अचानक, संयोग से वैसा हो गया।" यह विज्ञान नहीं है। विज्ञान का अर्थ है मूलकारण की व्याख्या।

संभवतः वैज्ञानिक प्रकृति के अनुकरण के आधार पर जीव का निर्माण कर सकें, किंतु हम उन्हें महत्त्व क्यों दें ? हमें आदि स्रष्टा भगवान् को महत्त्व देना चाहिए, यही हमारा तत्त्व-चिंतन है।

डॉ० सिंह—जब कोई वैज्ञानिक किसी प्राकृतिक नियम की खोज करता है, तो प्रायः वह उसका नामकरण अपने नाम के ऊपर करता है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, बिल्कुल ठीक है। प्रकृति का वह विधान तो पहले से ही विद्यमान है, किंतु शोध करने वाला दुष्ट वैज्ञानिक उसका श्रेय स्वयं लेना चाहता है।

वृद्धावस्था का विज्ञान

डॉ० सिंह—वे लोग वस्तुतः प्रकृति के विधान के विरुद्ध कार्य कर रहे हैं, किंतु प्रायः इस संघर्ष में वे आनंद अनुभव करते हैं।

श्रील प्रभुपाद— वह आनंद बचकाना है। कल्पना करो कि एक बच्चा सागर के तट पर अत्यंत परिश्रम के साथ महल तैयार करता है। वह आनंद है। वह एक वयस्क व्यक्ति का आनंद नहीं है। भौतिक लोगों ने मिथ्या आनंद का एक स्तर निर्मित किया है। उन्होंने सुविधाजनक सभ्यता के हेतु आडम्बर युक्त व्यवस्था का निर्माण किया है। किंतु वह सब मिथ्या है, क्योंकि वे ऐसी परिस्थिति का निर्माण नहीं कर सकते जिससे इसका आनंद ले सकें। किसी भी क्षण, किसी भी व्यक्ति को मृत्यु ठोकर मार सकती है और उसका सारा आनंद समाप्त हो जायगा।

डॉ० सिंह—यही कारण है कि वे लोग (वैज्ञानिक) कहते हैं कि भगवान् ने हमें सभी वस्तुएँ नहीं दी हैं, क्योंकि हम यहाँ नित्य रहने के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

श्रील प्रभुपाद—किंतु, भगवान् ने उन्हें वे सभी आवश्यक वस्तुएँ दी हैं जिनसे वे

शांतिपूर्वक रह सकें और भगवान् ने उनको वह प्रत्येक आवश्यक वस्तु दी है जिसके द्वारा वे लोग उन्हें पहचान सकें। अस्तु वे लोग भगवान् के बारे में जिज्ञासा क्यों नहीं करते ? इसके विपरीत वे ऐसे कार्य करते हैं जिससे भगवान् को भूलने में उन्हें सहायता मिले।

डॉ० सिंह—आजकल वैज्ञानिकों ने विज्ञान के क्षेत्र में एक संपूर्ण विभाग की ऐसी व्यवस्था की है, जिसे वृद्धावस्था का विज्ञान कहते हैं। इसमें वे लोग इस बात का अध्ययन कर रहे हैं कि जीवन को दीर्घजीवी कैसे बनाया जाय।

श्रील प्रभुपाद—उनका वास्तविक उद्देश्य जीवन का दुःख मिटाना होना चाहिए। माना कि एक वृद्ध व्यक्ति बहुत पीड़ा में है, वह अनेक रोगों से व्यथित है और अचानक डाक्टर लोग उसकी जीवनावधि को बढ़ा देते हैं। इससे क्या लाभ है ?

डॉ० सिंह—यही वे लोग हृदयारोपण के द्वारा करते हैं।

श्रील प्रभुपाद—यह मूर्खता है। उन्हें मृत्यु को रोकने दें, वह एक उपलब्धि होगी। उन्हें सभी रोगों को रोकने दें, ओह, यह एक उपलब्धि होगी। वे लोग कार्य नहीं कर सकते हैं ? इसलिए मैं कहता हूँ कि उनका सारा शोध-कार्य सामान्यतः अस्तित्त्व के लिए संघर्ष मात्र है। श्रीकृष्ण (भगवद्गीता १५.७) में कहते हैं—

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति॥

"इस बद्ध जगत् में यह जीव मेरा ही शाश्वत भिन्न अंश है। बद्ध दशा में होने के कारण यह मन और अन्य पाँच इंद्रियों के साथ घोर संघर्ष कर रहा है।"

छात्र—आजकल तेल की कमी है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ हम लोगों ने एक सभ्यता का निर्माण किया है जो तेल पर निर्भर है। यह निसर्ग के नियमों के विरुद्ध है, और इसलिए आजकल तेल की कमी है। प्रकृति के नियमानुसार जाड़ा अब आ रहा है। वैज्ञानिक

इसको रोक नहीं सकते हैं और न तो इसे ग्रीष्म ऋतु में बदल सकते हैं। वे भ्रमवश सोचते हैं कि उन्होंने प्रकृति को नियंत्रण में कर लिया है। भगवद्-गीता में श्रीकृष्ण हमें सूचित करते हैं कि वस्तुतः प्रकृति के द्वारा जो गति-विधियाँ संचालित होती हैं, प्राणी स्वयं को उसका कर्ता समझता है। सूर्य अब उग रहा है। क्या वे इसको अंधकार बना सकते हैं? और जब अँधेरा रहता है, तब क्या वे लोग सूर्य को आदेश दे सकते हैं, "उठो," वे लोग यह नहीं अनुभव करते कि यदि उन्हें वास्तविक रूप से प्रकृति पर विजय पानी है तो उन्हें जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा और रोगों को जीतने का प्रयत्न करना चाहिए। भगवद्गीता (७.१४) में श्रीकृष्ण कहते हैं—

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते॥

"मेरी यह दैवी शक्ति अर्थात् त्रिगुणमयी माया बड़ी दुस्तर है। परंतु जो मेरे शरणागत हो जाते हैं, वे सुगमतापूर्वक इससे तर जाते हैं।"

डॉ० सिंह—अतएव, क्या प्राकृतिक विधानों को जीतना बड़ा दुष्कर है?

श्रील प्रभुपाद—भौतिकवादियों के लिए यह असंभव है। किंतु व्यक्ति यदि श्रीकृष्ण के सम्मुख समर्पित हो जाय तब यह सरल बन जाता है।

योनियों का वास्तविक उद्गम

डॉ० सिंह—जीवात्माओं के इतने विविध प्रकार क्यों हैं, इसे समझाने के लिए वैज्ञानिक लोग कहते हैं कि कभी विकास-प्रक्रिया के अंतर्गत कोशिका के जीन्स जो सामान्यतया दूसरी पीढ़ी के हेतु प्रजनन करते हैं, कभी-कभी नकल करते समय कोशिकाओं के जीन्स भी गलती करते हैं, जैसे मुद्रणालय में कभी-कभी भूलें होती हैं, कुछ परिस्थितियों में ये भूलें अथवा परिवर्तन सामने आ गए हैं और जीन्स में अंतर के कारण विभिन्न जीवात्माओं की विभिन्न योनियाँ हो गई हैं।

श्रील प्रभुपाद—किंतु अज्ञात समय से वह "भूल" चली आ रही है, क्योंकि आप

देखेंगे कि वे सभी प्रकार की जीवात्माएँ सदैव अस्तित्त्व में रही हैं। अस्तु, वह "भूल" सनातन है। किंतु जब कोई भूल स्थायी होती है, तब वह भूल नहीं रह जाती, वह बुद्धिमान बन जाती है।

डॉ० सिंह—किंतु वैज्ञानिक कहते हैं कि यदि परिवर्तन नहीं होगा, तब सारे ब्रह्मांड में केवल एक प्रकार की जीवात्माएं ही रहेंगी।

श्रील प्रभुपाद—नहीं। प्रत्येक जीवात्मा का एक भिन्न मस्तिष्क है और इसलिए विभिन्न प्रकार की प्रवृत्तियों को आत्मसात करने के लिए अनेक प्रकार की योनियाँ हैं। उदाहरण के लिए हम यहाँ टहल रहे हैं, किंतु अधिकांश लोग हमारा साथ देने के लिए नहीं आ रहे हैं, क्योंकि उनकी प्रवृत्ति हमारी अपेक्षा भिन्न है। यह अंतर क्यों विद्यमान है?

डॉ० सिंह—हो सकता है कि यह एक भूल हो।

श्रील प्रभुपाद—यह भूल नहीं है। यह उनकी इच्छा है, और मृत्यु के समय प्रत्येक व्यक्ति ठीक-ठीक अपनी कामनानुसार एक शरीर प्राप्त करेगा। श्रीकृष्ण भगवद्गीता (८.६) में कहते हैं—

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥

"जिस-जिस भी भाव का स्मरण करते हुए जीव देह त्यागता है, उस उस को ही निस्संदेह प्राप्त होता है, क्योंकि वह जीवन में सदा उसी भाव से भावित रहा है।" मृत्यु के समय आप जिसके बारे में सोचते हैं, ठीक वही दूसरे शरीर का निर्णय करता है। प्रकृति आपको शरीर देगी, निर्णय आपके हाथों में नहीं है, वरन् वह प्रकृति के हाथों में है और वह प्रकृति भगवान् के आदेशानुसार कार्य कर रही है।

डॉ० सिंह—किंतु ऐसा लगता है कि विज्ञान के पास इस बात का प्रमाण है कि विभिन्न योनियाँ अवश्य ही भूलों के कारण उत्पन्न होती हैं।

श्रील प्रभुपाद—वह उनकी भूल है। प्रकृति के विधान में त्रुटियाँ नहीं हैं। रेलवे के डिब्बों में प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी और तृतीय श्रेणी के विभाग हैं। यदि

आप तृतीय श्रेणी का एक टिकट खरीदें, किंतु भूल से प्रथम श्रेणी के विभाग में जाएं तब आप वहाँ नहीं बैठने पायेंगे। वहाँ कई विभाग हैं, यह कोई भूल नहीं है। वह एक व्यवस्था है। किंतु यह आपकी भूल है कि आप गलत विभाग में आ गए थे। अस्तु, भगवान् इतने पूर्ण हैं कि वे जानते हैं कि कौन-कौन-सी भूलें होंगी। इसलिए आप जो भूलें करते हैं, उसी के अनुसार आप एक विशेष शरीर में प्रवेश करते हैं, "यहाँ-यहाँ आएँ। शरीर तैयार है।" यहाँ चौरासी लाख योनियाँ हैं और प्रकृति गणित के अनुसार ठीक-ठीक विभिन्न शरीर देने का कार्य करती है। जब सरकार एक नगर बसाती है, तब वह नगर के पूर्ण होने से पूर्व जेलखाना बनवाती है, क्योंकि सरकार को ज्ञात है कि यहाँ अनेक अपराधी होंगे, जिन्हें जेल में जाना ही होगा। यह सरकार की भूल नहीं है, यह अपराधियों की गलतियाँ हैं। क्योंकि वे अपराधी बनते हैं, इसलिए उन्हें वहाँ जाना ही होगा। यह उन लोगों की भूल है।

प्रकृति में त्रुटि नहीं है। भगवद्गीता (९.१०) में श्रीकृष्ण कहते हैं—

मयाऽध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्।
हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते॥

"हे कुंतीपुत्र! यह अपरा प्रकृति माया मेरी अध्यक्षता में कार्य करती हुई चराचर प्राणियों को रचती है। इसी कारण इस जगत् का बारम्बार सृजन और संहार होता है।" प्रकृति भगवान् श्रीकृष्ण की देख-रेख में कार्य करती है, इसलिए प्रकृति कैसे भूल कर सकती है? किंतु हम लोग गलतियाँ करते हैं, हम चमत्कृत हो गए हैं, हमारी इंद्रियाँ अपूर्ण हैं और हम ठगते हैं। श्रीभगवान् और मनुष्य में यही अंतर है। श्रीभगवान् की इंद्रियाँ अपूर्ण नहीं हैं। उनकी इंद्रियाँ पूर्ण हैं।

संतुष्ट पशु

डॉ० उल्फ रोत्तके—चूंकि हमारी इंद्रियाँ त्रुटिपुर्ण हैं इसलिएं हमारी इंद्रियों की तकनीकी वृद्धि भी निश्चित रूप से त्रुटिपूर्ण होगी।

डॉ० सिंह—सूक्ष्मदर्शी यंत्र जिससे हम लोग सूक्ष्म वस्तुओं का पता लगाते हैं, वह भी अवश्य ही त्रुटिपूर्ण होगा।

श्रील प्रभुपाद—भौतिक अस्तित्त्व का अर्थ है त्रुटिपूर्ण अस्तित्त्व। यदि आप त्रुटिपूर्ण ज्ञान और अपूर्ण इंद्रियों के सहारे किसी वस्तु का निर्माण करें, जो कुछ भी आप बनाएँगे वह अवश्य ही त्रुटिपूर्ण होगा।

डॉ० सिंह—यहाँ तक कि वैज्ञानिक यदि पूर्ण सूक्ष्मदर्शी यंत्र बनाने की कल्पना करें फिर भी त्रुटिपूर्ण आँखों से उन्हें उसमें होकर देखना पड़ेगा।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, यह ठीक है। इसलिए हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वैज्ञानिक चाहे जो कुछ भी कहें, वह त्रुटिपूर्ण है।

डॉ० सिंह—किंतु वे लोग बिल्कुल संतुष्ट दिखाई देते हैं।

श्रील प्रभुपाद—गधा भी संतुष्ट है। धोबी का बोझ ढोने में ही गधा संतुष्ट है। प्रत्येक जीव संतुष्ट है, यहाँ तक कि मैले के भीतर का कीटाणु भी। यह प्रकृति का विधान है।

डॉ० उल्फ रोत्तके—ऐसा कहा जाता है कि दरिद्र भिखारी भी अपनी पाई पर गर्व करता है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ। भारतवर्ष के कुछ भागों में व्यक्ति कुत्तों को भूख से मरते देख सकता है। किंतु जैसे ही वहाँ बुभुक्षित कुत्ता एक कुतिया पा जाता है, वह उसके साथ कामभोग से संतुष्ट हो जाता है। क्या यह संतोष है? कुत्ता भूख से पीड़ित है, तिस पर भी वह काम-भोग से संतुष्ट है।

पंद्रहवाँ प्रातःकालीन भ्रमण

७ दिसम्बर, १९७३.

लॉस ऐंजिल्स के निकट प्रशान्त महासागर के तट पर।

श्रील प्रभुपाद के साथ हैं—डॉ० सिंह, डॉ० डब्ल्यू० एच० उल्फ रोत्तके एवं अन्य छात्र।

श्रीभगवान् को देखने के लिए नेत्र पाना

छात्र—गत डेढ़ सौ वर्षों से पश्चिमी अध्यात्मवादियों के सम्मुख तर्क और विश्वास के बीच संबंध स्थापित करने की समस्या ही प्रमुख रही है। वे लोग तर्क के बल पर विश्वास को समझने का प्रयत्न करते हैं, किंतु वे लोग तार्किक शक्ति एवं विश्वास के बीच संबंध स्थापित करने में असफल रहे हैं। उनमें से कुछ का भगवान् में विश्वास है, किंतु उनके तर्क उन्हें बतलाते हैं कि ईश्वर नहीं है। उदाहरणार्थ, वे कहेंगे कि जब हम भगवान् को प्रसाद चढ़ाते हैं, तब केवल यह विश्वास किया जाता है कि भगवान् उसे स्वीकार करते हैं क्योंकि हम उन्हें देख नहीं सकते।

श्रील प्रभुपाद—वे लोग श्रीभगवान् को नहीं देख सकते, किंतु मैं उन्हें [भगवान् को] देख सकता हूँ। मैं भगवान् को देखता हूँ, और इसीलिए मैं उन्हें प्रसाद चढ़ाता हूँ। चूंकि वे उन्हें नहीं देख सकते, अस्तु वे मेरे पास आएँ जिससे कि मैं उनकी आँखें खोल सकूं। वे लोग अंधे हैं—मोतियाबिंदु से पीड़ित हैं, इसलिए मैं

उनकी शल्य क्रिया करूँगा और उन्हें दृष्टि मिल जायगी—वे देखने लगेंगे। यही हमारा कार्यक्रम है।

छात्र—वैज्ञानिक कहते हैं कि जो कुछ वे लोग अपनी इंद्रियों के द्वारा सहज ही ग्रहण कर सकते हैं, वही उनकी इंद्रियग्राहिता का सामान्य आधार है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, वे वस्तु को अपनी इंद्रियों के द्वारा ग्रहण कर सकते हैं, किंतु बड़े अपूर्ण ढंग से। वे लोग रेत को अपनी इंद्रियों के द्वारा ग्रहण करते हैं, किंतु क्या वे लोग देख सकते हैं कि रेत किसने बनाई? यह रेत है और यह सागर है। ये दोनों सीधे इंद्रियगोचर हैं, किंतु कोई व्यक्ति रेत और सागर के मूल को स्पष्टतया कैसे देख सकता है?

छात्र—वैज्ञानिक कहते हैं कि यदि रेत और सागर भगवान् के द्वारा निर्मित हैं तब हम उन्हें देखने में समर्थ हो जायेंगे, ठीक उसी तरह जैसे हम रेत और सागर को देखते हैं।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, वे लोग श्रीभगवान् को देख सकते हैं, किंतु उन्हें देखने के हेतु दृष्टि अवश्य मिलनी चाहिए। वे लोग अंधे हैं। अतएव वे पहले मेरे पास उपचार के लिए आएँ। शास्त्र कहते हैं व्यक्ति को गुरु के पास उपचार के लिए अवश्य जाना चाहिए, जिससे कि वह श्रीभगवान् को समझ सके। वे लोग अंधी आँखों से श्रीभगवान् को कैसे देख सकेंगे?

छात्र—किंतु श्रीभगवान् को देखना अलौकिक है। वैज्ञानिक केवल लौकिक दृष्टि को ही ध्यान में रखते हैं।

श्रील प्रभुपाद—प्रत्येक वस्तु अलौकिक है। उदाहरण के लिए आप सोच सकते हैं कि निर्मल आकाश में कुछ भी नहीं है—अर्थात् खाली है, किंतु आप के नेत्र अपूर्ण हैं। आकाश में अगणित नक्षत्र हैं। आप उन्हें देख नहीं सकते क्योंकि आपके नेत्र सीमित हैं चूँकि यह आपके वश में नहीं है कि आप उसक अनुभव करें, अस्तु आप को मेरे कथन को स्वीकार करना चाहिए: "हाँ, व लाखों ग्रह हैं।" क्या अंतरिक्ष इसीलिए खाली है कि आप तारों को देख न सकते हो? नहीं। आपकी इंद्रियों की अपूर्णता वैसा सोचने के लिए आ को आगे बढ़ाती है।

छात्र—वैज्ञानिक कुछ बातों से संबंधित अपने अज्ञान को स्वीकार कर लेंगे, किंतु वे कहते हैं कि जो कुछ वे देख नहीं सकते, उसको वे लोग स्वीकार नहीं करेंगे।

श्रील प्रभुपाद—यदि वे लोग अज्ञानी हैं, तब उन्हें किसी अन्य से जो सत्य को जानता है ज्ञान स्वीकार करना होगा।

छात्र—किंतु वे लोग कहते हैं, "तब क्या होगा, यदि जो कुछ हमें बताया गया है, वह गलत है ?

श्रील प्रभुपाद—तब वह उनका दुर्भाग्य है। क्योंकि उनकी अपूर्ण इंद्रियाँ भगवान् को जान नहीं सकतीं। उन्हें इस संबंध में किसी अधिकारी व्यक्ति से जानना होगा। यही प्रक्रिया है। यदि वे किसी अधिकारी से संपर्क नहीं करते और वे किसी धोखेबाज से संपर्क स्थापित करते हैं, तो वह उनका दुर्भाग्य है। किंतु प्रक्रिया यह है कि जब कभी आपकी इंद्रियाँ काम नहीं कर सकतीं, तब आपको अवश्य ही किसी अधिकारी व्यक्ति के साथ तथ्य को जानने के हेतु संपर्क स्थापित करना चाहिए।

नास्तिकों की निराशा

डॉ० सिंह—कठिनाई यह है कि नास्तिकों के समूह में आप ईश्वर का अस्तित्व सिद्ध नहीं कर सकते हैं।

श्रील प्रभुपाद—नास्तिक दुष्ट हैं। हमें उनको सिखाना चाहिए जो तार्किक हैं। प्रत्येक वस्तु किसी व्यक्ति के द्वारा बनाई गई है, रेत किसी की बनाई हुई है, पानी किसी के द्वारा बनाया गया है और आकाश किसी के द्वारा बनाया गया है। श्रीकृष्णभावनामृत का अर्थ है उस किसी "एक" को जानना।

डॉ० सिंह—वैज्ञानिक कहेंगे, "उसे हमारे सम्मुख प्रस्तुत करो, जिससे हम उसको देख सकें।"

श्रील प्रभुपाद—और मैं उन लोगों को उत्तर देता हूँ, "मैं आपके सम्मुख प्रस्तुत करता हूँ, किंतु साथ ही साथ आपको प्रशिक्षण भी लेना होगा।" उसे देखने के हेतु आपको अपनी आँखों को भी उसको देखने के योग्य बनना पड़ेगा।

यदि आप अंधे हों, किंतु डॉक्टर के पास नहीं जाना चाहते, तब आप अपने अंधेपन से कैसे मुक्त होंगे और देख सकेंगे ? आपका उपचार होना ही चाहिए, वही इंजेक्शन है।

छात्र—उस कदम के लिए विश्वास की आवश्यकता है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, किंतु अंधविश्वास नहीं—व्यवहारवादी विश्वास। यदि आप कुछ सीखना चाहते हों, तब आपको अवश्य ही विशेषज्ञ के पास जाना चाहिए। यह अंध विश्वास नहीं है, यह व्यवहारवादी विश्वास है। आप अपने आप कुछ नहीं सीख सकते।

छात्र—यदि कोई व्यक्ति वास्तविक रूप में ईमानदार है, तो क्या वह सदैव एक प्रामाणिक गुरु से मिलेगा ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ। **गुरु-कृष्ण-प्रसादे पाय भक्ति-लता-बीज।** श्रीकृष्ण आपके भीतर हैं। और जैसे ही वे देखते हैं कि आप ईमानदार हैं, वे आपको सही व्यक्ति के पास भेज देंगे।

छात्र—और यदि आप पूर्णरूपेण ईमानदार नहीं हैं, तब आपको शिक्षक के स्थान पर एक धोखेबाज मिल जायेगा ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ। यदि आप अपने को ठगाना चाहते हों, तब श्रीकृष्ण आपको किसी ठग के पास भेज देंगे। श्रीकृष्ण अति बुद्धिमान हैं। यदि आप एक ठग हैं, तो वह आपको भली भाँति ठगेगा। किंतु यदि आप सचमुच ईमानदार हैं, तब वह आपको मार्गदर्शन देगा। भगवद्गीता (१५.१५) में श्रीकृष्ण उचित कहते हैं :—**सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च।** "मैं सब प्राणियों के हृदय में बैठा हूँ और मुझसे ही स्मृति ज्ञान और विस्मृति होती है।" श्रीकृष्ण स्मृति और विस्मृति दोनों के संबंध में बातें करते हैं। यदि आप ठग हों तो श्रीकृष्ण आपको बुद्धि देंगे, जिससे आप उन्हें सदैव के लिए भूल जाएँ।

छात्र—किंतु नास्तिक हावी हैं। वे प्रभुत्व रखते हैं।

श्रील प्रभुपाद—एक सेकंड में माया की एक ठोकर से उनका सारा प्रभुत्व समाप्त हो जाता है। माया की यही प्रकृति है। नास्तिक नियंत्रण में हैं, किंतु माया

अथवा भ्रम के कारण वे सोचते हैं कि वे मुक्त हैं।

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः।
राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः॥

"जो इस प्रकार संमोहित हैं, वे आसुरी तथा अनीश्वरवादी स्वभाव को धारण किए रहते हैं। उस मोहमयी अवस्था में उनकी मुक्ति की आशा, उनके सकाम कर्म और उनके द्वारा अश्रित ज्ञान आदि सभी कुछ निष्फल हो जाते हैं।" [गीता ६.१२] क्योंकि वे व्यग्र हैं, उनकी सभी आशाएँ समाप्त हो गई हैं। वही यहाँ श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित है और वस्तुतः वही हो रहा है। अतएव उनकी अनेक वड़ी योजनाएँ, इस चंद्रमा की परियोजना की तरह असफल हो गई हैं, किंतु वे लोग अभी भी यह दावा करते हैं कि वे प्रकृति पर प्रभुत्व रख सकते हैं।

डॉ० सिंह—वे लोग अपने होश में नहीं आना चाहते हैं।

श्रील प्रभुपाद—इसीलिए वे लोग दुष्ट हैं।

वैज्ञानिक वीरता पूर्वक नरक की ओर

श्रील प्रभुपाद—एक समझदार व्यक्ति अच्छा पाठ सीखेगा, किंतु एक दुष्ट कभी भी अच्छा पाठ नहीं ग्रहण करेगा। एक महान् कवि कालिदास के बारे में एक कहानी है कि वे एक वड़े मूढ़ भी थे। एक बार कालिदास वृक्ष की एक डाली पर वैठे हुए थे और साथ ही साथ उसे काट भी रहे थे। एक सज्जन पुरुष ने उनसे पूछा, "आप यह वृक्ष की डाली क्यों काट रहे हैं? आप गिर जायेंगे।"

कालिदास ने उत्तर दिया, "नहीं, नहीं मैं नहीं गिरूँगा।" इसलिए उन्होंने डाली को काटना जारी रखा और वे गिर पड़े। निष्कर्ष यह है कि वह एक मूढ़ थे क्योंकि उन्होंने अच्छी सलाह नहीं मानी। उसी प्रकार तथाकथित वैज्ञानिक-उन्नति के साथ वैज्ञानिक नरक में जा रहे हैं। किंतु जब उनको यह वताया जाता है तव वे लोग ध्यान नहीं देते। इसलिए वे

लोग दुष्ट हैं। दुष्ट लोग बार-बार योजनाएँ बनाते हैं, अपनी एक योजना को असफल होते देखकर, वे दूसरी योजना बनाते हैं। यह योजना भी निष्फल हो जाती है। इसलिए वे दूसरी योजना बनाते हैं। तथापि जब हम उन्हें समझाने का प्रयत्न करते हैं कि आपकी सभी भौतिक योजनाएँ असफल और व्यर्थ हो जायेंगी, तब भी वे हमारी बातें सुनने से इनकार कर देते हैं। यही दुष्टता है। दुष्ट लोग चबाये हुए को पुनः चबाते हैं। घर में, सड़क पर, रात्रि क्लब के अंतर्गत, नाट्य गृह में जहाँ कहीं भी वह रहेंगे, काम-भोग ही विभिन्न रूपों में उनका आनंद होगा।

छात्र—श्रील प्रभुपादजी, कहा जा सकता है कि वही उनकी वीरता है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, आप वैसा कह सकते हैं। किंतु वह वीरता उनकी दुष्टता है। वे लोग वीरतापूर्वक नरक में जा रहे हैं, बस। एक बार एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का पीछा कर रहा था और जो मनुष्य पीछा कर रहा था पूछा, "आप क्यों भाग रहे हैं ? क्या आप मुझसे डरते हैं ?" दूसरे मनुष्य ने उत्तर दिया, "मैं आपसे नहीं डरता हूँ। मैं क्यों न दौड़ूँ ? मैं क्यों रुकूँ ?" इसी प्रकार घोर भौतिकतावादी वीरतापूर्वक नरक में जा रहा है। वह कहता है, "मैं अपने पापयुक्त कर्मों को क्यों छोड़ूँ ? मैं किसी भी प्रतिक्रिया का वीरतापूर्वक सामना करूँगा।"

डॉ० सिंह—वे पागल हैं।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, पागल। वेद कहते हैं कि यदि एक बार मनुष्य बावला हो गया है अथवा भूतग्रस्त बन गया, तब वह हर प्रकार की मूर्खतापूर्ण बातें करता है। उसी प्रकार कोई भी जो भौतिक शक्ति के प्रभाव में है, वह पागल है। इसलिए वह केवल व्यर्थ की बातें करता है, बस। यद्यपि वैज्ञानिक विज्ञान के क्षेत्र में सिद्धहस्त नहीं हैं, किंतु वे दूसरों को धोखा देने में और वाग्चातुर्य में दक्ष हैं।

रहस्यमय दूरदर्शन

डॉ० सिंह—उनके पास अब वे वस्तुएँ हैं, जो पहले नहीं थीं, जैसे दूरभाष, दूरदर्शन

अथवा भ्रम के कारण वे सोचते हैं कि वे मुक्त हैं।

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः।
राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः॥

"जो इस प्रकार संमोहित हैं, वे आसुरी तथा अनीश्वरवादी स्वभाव को धारण किए रहते हैं। उस मोहमयी अवस्था में उनकी मुक्ति की आशा, उनके सकाम कर्म और उनके द्वारा अश्रित ज्ञान आदि सभी कुछ निष्फल हो जाते हैं।" [गीता ९.१२] क्योंकि वे व्यग्र हैं, उनकी सभी आशाएँ समाप्त हो गई हैं। वही यहाँ श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में वर्णित है और वस्तुतः वही हो रहा है। अतएव उनकी अनेक बड़ी योजनाएँ, इस चंद्रमा की परियोजना की तरह असफल हो गई हैं, किंतु वे लोग अभी भी यह दावा करते हैं कि वे प्रकृति पर प्रभुत्व रख सकते हैं।

डॉ० सिंह—वे लोग अपने होश में नहीं आना चाहते हैं।

श्रील प्रभुपाद—इसीलिए वे लोग दुष्ट हैं।

वैज्ञानिक वीरता पूर्वक नरक की ओर

श्रील प्रभुपाद—एक समझदार व्यक्ति अच्छा पाठ सीखेगा, किंतु एक दुष्ट कभी भी अच्छा पाठ नहीं ग्रहण करेगा। एक महान् कवि कालिदास के बारे में एक कहानी है कि वे एक बड़े मूढ़ भी थे। एक बार कालिदास वृक्ष की एक डाली पर बैठे हुए थे और साथ ही साथ उसे काट भी रहे थे। एक सज्जन पुरुष ने उनसे पूछा, "आप यह वृक्ष की डाली क्यों काट रहे हैं? आप गिर जायेंगे।"

कालिदास ने उत्तर दिया, "नहीं, नहीं मैं नहीं गिरूँगा।" इसलिए उन्होंने डाली को काटना जारी रखा और वे गिर पड़े। निष्कर्ष यह है कि वह एक मूढ़ थे क्योंकि उन्होंने अच्छी सलाह नहीं मानी। उसी प्रकार तथाकथित वैज्ञानिक-उन्नति के साथ वैज्ञानिक नरक में जा रहे हैं। किंतु जब उनको यह बताया जाता है तब वे लोग ध्यान नहीं देते। इसलिए वे

लोग दुष्ट हैं। दुष्ट लोग बार-बार योजनाएँ बनाते हैं, अपनी एक योजना को असफल होते देखकर, वे दूसरी योजना बनाते हैं। यह योजना भी निष्फल हो जाती है। इसलिए वे दूसरी योजना बनाते हैं। तथापि जब हम उन्हें समझाने का प्रयत्न करते हैं कि आपकी सभी भौतिक योजनाएँ असफल और व्यर्थ हो जायेंगी, तब भी वे हमारी बातें सुनने से इनकार कर देते हैं। यही दुष्टता है। दुष्ट लोग चबाये हुए को पुनः चबाते हैं। घर में, सड़क पर, रात्रि क्लब के अंतर्गत, नाट्य गृह में जहाँ कहीं भी वह रहेंगे, काम-भोग ही विभिन्न रूपों में उनका आनंद होगा।

छात्र—श्रील प्रभुपादजी, कहा जा सकता है कि वही उनकी वीरता है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, आप वैसा कह सकते हैं। किंतु वह वीरता उनकी दुष्टता है। वे लोग वीरतापूर्वक नरक में जा रहे हैं, बस। एक बार एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का पीछा कर रहा था और जो मनुष्य पीछा कर रहा था पूछा, "आप क्यों भाग रहे हैं? क्या आप मुझसे डरते हैं?" दूसरे मनुष्य ने उत्तर दिया, "मैं आपसे नहीं डरता हूँ। मैं क्यों न दौड़ूँ? मैं क्यों रुकूँ?" इसी प्रकार घोर भौतिकतावादी वीरतापूर्वक नरक में जा रहा है। वह कहता है, "मैं अपने पापयुक्त कर्मों को क्यों छोड़ूँ? मैं किसी भी प्रतिक्रिया का वीरता-पूर्वक सामना करूँगा।"

डॉ० सिंह—वे पागल हैं।

श्रील प्रभुपाद—हाँ, पागल। वेद कहते हैं कि यदि एक बार मनुष्य बावला हो गया है अथवा भूतग्रस्त बन गया, तब वह हर प्रकार की मूर्खतापूर्ण बातें करता है। उसी प्रकार कोई भी जो भौतिक शक्ति के प्रभाव में है, वह पागल है। इसलिए वह केवल व्यर्थ की बातें करता है, बस। यद्यपि वैज्ञानिक विज्ञान के क्षेत्र में सिद्धहस्त नहीं हैं, किंतु वे दूसरों को धोखा देने में और वाग्चातुर्य में दक्ष हैं।

रहस्यमय दूरदर्शन

डॉ० सिंह—उनके पास अब वे वस्तुएँ हैं, जो पहले नहीं थीं, जैसे दूरभाष, दूरदर्शन

वायुयान, प्रक्षेपण-अस्त्र और अनेक नई आविष्कृत वस्तुएँ।

श्रील प्रभुपाद—किंतु इन दूरभाषों की अपेक्षा अधिक अच्छे दूरभाष हैं जिनके बारे में वैज्ञानिकों को पता नहीं है। भगवद्गीता में, संजय जब अपने स्वामी धृतराष्ट्र के साथ बैठा था, उसने इसका प्रदर्शन किया था। उसने दूर कुरुक्षेत्र के युद्ध के मैदान में घटित होने वाली सारी घटनाएँ बताईं। संजय की दृष्टि वस्तुतः दूरभाष की अपेक्षा श्रेष्ठतर थी। यह रहस्यमय दूरदर्शन था। यह हृदय के अंतर् का दूरभाष था क्योंकि संजय युद्ध के मैदान से बहुत दूर एक कक्ष में बैठा था, तथापि वह वहाँ घटने वाली सारी घटनाओं को देख रहा था। भगवद्गीता में धृतराष्ट्र ने संजय से पूछा, "मेरे पुत्र और भतीजे कैसे हैं ? वे लोग क्या कर रहे हैं ?" तब संजय ने बताया कि दुर्योधन किस प्रकार द्रोणाचार्य के पास जा रहा था, द्रोणाचार्य क्या कह रहे थे, दुर्योधन किस प्रकार उत्तर दे रहा था और इस प्रकार की अनेक अन्य बातें। यद्यपि ये गतिविधियाँ अत्यंत दूर घटित हो रही थीं, सामान्य आँखों से उन्हें देखना असंभव था, फिर भी अपनी रहस्यमयी शक्ति के बल से उन्हें देखा और उनका वर्णन किया। यह वास्तविक विज्ञान है।

डॉ० सिंह—कतिपय वैज्ञानिक कहते हैं कि हमने प्लास्टिक और औषधि जैसी वस्तुएँ बनाकर प्रकृति के ऊपर विजय पाई है।

श्रील प्रभुपाद—वैदिक काल में लोग सोने और चाँदी की थाली में भोजन करते थे, किंतु अब वैज्ञानिकों ने प्लास्टिक की प्लेट बना कर उन्नति की है। [हँसी]

डॉ० सिंह—प्लास्टिक एक बड़ी समस्या बन गई है क्योंकि लोग उससे छुटकारा नहीं पा सकते हैं। इसको समाप्त करने का भी कोई मार्ग नहीं है। इसका ढेर निरंतर बढ़ता जा रहा है।

डॉ० उल्फ रोत्तके—भौतिकवादी यदि यह कहें तो वे अधिक ईमानदार सिद्ध होंगे, "हम अपने सपनों से हटाया जाना पसंद नहीं करते। अपनी इंद्रियों को मशीनों के साथ आनंद लेने के हेतु हम सदैव प्रयत्नशील रखना चाहते हैं।" किंतु वे यह स्वीकार नहीं करेंगे कि आनंद लेने के लिए किए ग

उनके प्रयत्न सदैव असफल हो जाते हैं।

श्रील प्रभुपाद—वह उनकी मूर्खता है। अन्ततोगत्वा उन्हें यह स्वीकार करना होगा।

डॉ० उल्फ रोत्तके—किंतु वे कहते हैं, "प्रयत्न करो, पुनः पुनः प्रयत्न करो।"

श्रील प्रभुपाद—वे कैसे प्रयत्न करेंगे? कल्पना कीजिए कि आप देख नहीं सकते हैं, क्योंकि मोतियाबिंद से पीड़ित हैं। यदि आप देखने का प्रयत्न करें, प्रयत्न करें, प्रयत्न करें, प्रयत्न करें, प्रयत्न करें। क्या यह मोतियाबिंद का उपचार है? नहीं, आप इस प्रकार कभी भी अच्छे नहीं होंगे। आपको निश्चित रूप से डाक्टर के पास जाना होगा, वह आँख को शल्यक्रिया द्वारा आपकी आँखों को ज्योति सुरक्षित रखने के हेतु आपरेशन करेगा। आप केवल प्रयत्न के द्वारा देख नहीं सकते।

डॉ० उल्फ रोत्तके—यह तो ठीक-ठीक वही है जो वे स्वीकार नहीं करना चाहते हैं कि भौतिक विज्ञान के द्वारा सत्य को जानने का उनका सारा प्रयत्न असफल हो चुका है।

श्रील प्रभुपाद—वे मूर्ख हैं। अच्छी सलाह वे नहीं ग्रहण करेंगे। यदि आप किसी दुष्ट को अच्छी सलाह दें तो वह साँप की भाँति क्रोधित हो जायगा। मान लें कि आप एक सर्प को अपने घर में लाते हैं और उससे कहते हैं, "मेरे प्रिय सर्प, कृपया मेरे साथ रहो। प्रति दिन मैं आपको स्वादिष्ट भोजन, दूध और केला दूंगा।" सर्प बहुत प्रसन्न होगा, किंतु फल यह निकलेगा कि उसका विष बढ़ेगा और एक दिन आप कहेंगे, "आह।" [सर्प के काटे हुए व्यक्ति की नकल करते हैं]

डॉ० उल्फ रोत्तके—किंतु वैज्ञानिक कभी भी आशा नहीं छोड़ सकते।

श्रील प्रभुपाद—प्रत्येक क्षण उनकी योजनाएँ असफल हो रही हैं, किंतु तिस पर भी वे आशा करते हैं।

छात्र—श्रील प्रभुपादजी, एक पुस्तकालयाध्यक्ष ने चाहा है कि मैं यह सिद्ध करूँ कि भगवद्गीता पांच हजार वर्ष पुरानी है। उसने पांच हजार वर्ष पूर्व लिखी गई एक प्रति भी देखनी चाही है।

श्रील प्रभुपाद—मान लो कि मैं एक अँधेरे कक्ष में जाऊँ और जो व्यक्ति वहाँ पहले से विद्यमान है, उससे कहूँ, "सूर्य निकल आया है। बाहर आओ।" अँधेरे में रहने वाला व्यक्ति कह सकता है, "प्रकाश है, इसका क्या प्रमाण है ? पहले इसको मेरे सम्मुख सिद्ध करो, तब मैं बाहर निकलूँगा।" मैं उसके साथ तर्क कर सकता हूँ, "कृपया बाहर आ कर देखिए।" किंतु वह यदि देखने के लिए बाहर नहीं निकलता, तो प्रमाण की प्रतीक्षा में वह अज्ञानी ही रह जायगा। इसलिए आप यदि मात्र भगवद्गीता पढ़ें तो आपको प्रत्येक वस्तु दिखाई देगी। आओ और देखो। यह प्रमाण है।

सोलहवाँ प्रातःकालीन भ्रमण

१० दिसम्बर, १९७३.

लॉस ऐंजिल्स के निकट, प्रशान्त महासागर के तट पर।

श्रील प्रभुपाद के साथ हैं—डॉ० सिंह, हृदयानंद दास गोस्वामी और अन्य छात्रगण।

"सर्वोच्च" का अर्थ

श्रील प्रभुपाद—इस भौतिक जगत् में सर्वोच्चता का क्या अर्थ है ? राष्ट्रपति निक्सन को अपने राज्य में आप सर्वोच्च व्यक्ति के रूप में क्यों स्वीकार करते हैं ?

डॉ० सिंह—क्योंकि उनके हाथ में कुछ अधिकार हैं।

श्रील प्रभुपाद—ठीक है। और वे सर्वोच्च क्यों हैं ? क्योंकि सरकार के सर्वश्रेष्ठ [नं० एक] सेवक होने के नाते, उन्हें सबसे अधिक वेतन मिलता है, उनको श्रेष्ठतम सुविधाएँ प्राप्त हैं और उनका आदेश अंतिम होता है।

डॉ० सिंह—उनके पास अन्य लोगों को विश्वास दिलाने का अधिकार है।

श्रील प्रभुपाद—नहीं। आप उनसे सहमत नहीं भी हो सकते हैं, किंतु चूंकि उनके पास सर्वोच्च अधिकार हैं, आपको उनका कहना मानना होगा। यही उनका पद है। वह आपके स्वीकार करने अथवा न स्वीकार करने पर निर्भर नहीं हैं। सर्वोच्चता का यही अर्थ है। क्या ऐसा नहीं है ? वैदिक साहित्य कहता है

कि वह व्यक्ति जिसमें सर्वोच्चता के लक्षण होते हैं वह भाग्यशाली होता है। सर्वोच्च भाग्यशाली व्यक्ति श्रीभगवान् हैं। **लक्ष्मीसहस्रशतसंभ्रमसेव्यमानम्**—"उसकी सेवा सैकड़ों एवं सहस्रों लक्ष्मी अथवा भाग्य की देवियाँ करती हैं। [ब्रह्मसंहिता ५.२९] यहाँ इस ग्रह पर हम भाग्य की देवी से कुछ कृपा दृष्टि पाने के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। किंतु श्रीकृष्ण सदा सैकड़ों हजारों भाग्य की देवियों के द्वारा पूजे जाते हैं।

डॉ० सिंह—किसी एक को इतना भाग्यशाली सोचना हमारी चिंतन-शक्ति के परे है।

श्रील प्रभुपाद—हाँ। अस्तु, श्रीकृष्ण अचिन्त्य हैं, अनुमान से परे। हम लोग इसका अनुमान नहीं लगा सकते कि वे कितने महान् अथवा भाग्यशाली हैं। अचिन्त्य का अर्थ है, "वह जिसका हम लोग अनुमान नहीं लगा सकते।" हम श्रीभगवान् के ऐश्वर्य का केवल एक अंश ही देख सकते हैं—यह भौतिक प्रकृति जो परमात्मा की शक्ति का केवल आंशिक प्रदर्शन है। श्रीभगवान् की अनेक शक्तियाँ हैं। उनके पास अपरा शक्ति और परा शक्ति दोनों हैं। भगवद्गीता (७.४) में श्रीकृष्ण कहते हैं—

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा॥

"पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार ऐसे यह आठ प्रकार से विभाजित मेरी भिन्ना अपरा प्रकृति हैं।" भगवद्गीता के इसके बाद के श्लोक में श्रीकृष्ण अपनी परा शक्ति का वर्णन करते हैं जो अध्यात्म-जगत् के रूप में अभिव्यक्त हुई है। अतः यदि निम्न अपरा भौतिक शक्ति के अंतर्गत इतने प्रकार की अद्भुत वस्तुएँ हैं तो अध्यात्म-जगत् में कितनी आश्चर्यजनक वस्तुएं होंगी। यही "परा" का अर्थ है।

योग-शक्तियों के रहस्य

हृदयानंद दास गोस्वामी—और क्या ये सभी प्रकार के जीव जिन्हें हम धरती पर देखते हैं, वे अध्यात्मजगत् में रहते हैं ?

श्रील प्रभुपाद—हाँ। और जबकि इस अपरा शक्ति के अंतर्गत जीव की इतनी अधिक विभिन्नताएँ एवं वे अद्भुत प्रकार से विद्यमान हैं, तब तनिक विचार करो कि आध्यात्मिक लोक के अंतर्गत जीवन कितने अद्भुत प्रकार के होंगे ? यहाँ तक कि इस भौतिक ब्रह्माण्ड में भी कुछ ग्रह (लोकों) के निवासी अन्य ग्रहों पर रहने वालों की अपेक्षा अत्यंत श्रेष्ठ हैं। उदाहरणार्थ, पृथ्वी पर लोग रहस्यमय योग का अभ्यास अद्भुत शक्ति प्राप्त करने के हेतु करते हैं। किंतु सिद्धलोक के निवासियों के पास ये महान् रहस्यमयी योगीय शक्तियाँ स्वतः विद्यमान हैं। पृथ्वी पर यह स्वाभाविक है कि एक पक्षी उड़ सकता है, किंतु हम लोग मूल्यवान मशीनों के बिना नहीं उड़ सकते। तथापि सिद्धलोक जैसे ग्रहों पर वहाँ के निवासी एक लोक से दूसरे लोक तक बिना मशीन की सहायता के उड़ सकते हैं। अपनी इच्छानुसार जब चाहें दूसरे ग्रह लोक में जा सकते हैं। यहाँ तक कि पृथ्वी पर भी कुछ ऐसे योगी विद्यमान हैं, जो प्रातःकाल एक ही साथ एक ही समय पर चार स्थानों पर जगन्नाथ पुरी, रामेश्वर, हरिद्वार और द्वारिका में स्नान कर सकते हैं। एक योगी मित्र मेरे पिताजी से कलकत्ते में मिला करते थे। उस योगी ने उनको बतलाया था कि जब वह (योगी) सामान्यतया बैठ कर अपने गुरु को स्पर्श करेगा तब वह कलकत्ते से द्वारिका की यात्रा केवल एक मिनट (पल) में पूरी कर लेगा। यह योगकी शक्ति है। अस्तु, आजकल के ये वायुयान क्या हैं ? दुर्वासा मुनि ने सारे ब्रह्मांड की यात्रा की और वैकुंठलोक तक एक वर्ष में ही पहुँच गए थे। आधुनिक गणना के अनुसार ब्रह्मांड के कतिपय विशेष ग्रह पृथ्वी से तीस हजार प्रकाशवर्ष से भी अधिक दूर हैं। इसका अर्थ है कि यदि प्रकाश की गति से आप यात्रा करें तो इन ग्रहों तक पहुँचने में आपको चालीस हजार वर्ष लगेंगे। यहाँ तक कि यदि अंतरिक्ष यात्रियों

के पास साधन भी हों तो वे चालीस हजार वर्ष तक जीवित कैसे रहेंगे ? इसलिए वे इतने घमंड में क्यों हैं ?

डॉ० सिंह—वैज्ञानिकों के पास एक सिद्धांत है, जिसके बल पर वे एक ऐसी मशीन बना सकते हैं, जो प्रकाश की गति से चलेगी।

श्रील प्रभुपाद—वह मूढ़ता है। वे लोग यह कहते तो हैं, किंतु ऐसा कभी वह कर नहीं पायेंगे।

वैदिक ब्रह्मांड-विज्ञान

श्रील प्रभुपाद—अनेक ग्रह और तारे अदृश्य हैं। उदाहरणार्थ देखिए, जब राहु ग्रह सूर्य और चंद्रमा से होकर जाता है तब वहाँ ग्रहण छा जाता है। किंतु वैज्ञानिक, ग्रहण का वर्णन भिन्न प्रकार से करते हैं। वस्तुतः राहु ग्रह ग्रहण निर्मित करता है। ग्रहण से संबंधित आधुनिक वैज्ञानिक सिद्धांतों पर अनेक प्रश्न पूछे जा सकते हैं। वैदिक सूचना के अनुसार वैज्ञानिकों की व्याख्या गलत है।

डॉ० सिंह—किंतु वैज्ञानिक कहते हैं कि वे अपने सिद्धांतों को सिद्ध कर सकते हैं।

श्रील प्रभुपाद—वे कहते हैं कि विज्ञान प्रत्येक वस्तु को सिद्ध करता है। किंतु वह मूर्खतापूर्ण है। वैज्ञानिक स्वयं क्या है, के अतिरिक्त उसने प्रत्येक वस्तु को सिद्ध कर दिया है। वह क्या है, यह वैज्ञानिक नहीं जानता और वह मरता क्यों है ? यह भी वह नहीं जानता। यही उसके ज्ञान की सीमा है।

डॉ० सिंह—वे ब्रह्मांड का एक नमूना बना सकते हैं। वे ग्रहों और चंद्रमा का नमूना बना सकते हैं।

श्रील प्रभुपाद—यदि वे लोग ऐसी वस्तुएँ बना सकते हैं, तो बिजली बचाने के हेतु क्यों नहीं एक नकली सूर्य बना लेते ये दुष्ट लोग कहते तो प्रत्येक वस्तु हैं, किंतु वे कर कुछ नहीं सकते। यही उनकी स्थिति है। यदि वे ब्रह्मांड का नमूना बना सकते हैं, तो उन्हें सूर्य का एक बड़ा नमूना बनाने दें। तब अंधेरी

रात में बिजली के हेतु हम लोगों को इतना धन नहीं खर्च करना पड़ेगा। किंतु वे ऐसा कर नहीं सकते। तिस पर भी वे आयकर देने वालों से धन लेने के हेतु बड़ी-बड़ी बातें करते हैं। वे कहते हैं कि वे लोग चंद्रमा और सूर्य की रचना जानते हैं। अस्तु, क्यों नहीं वे सूर्य और चंद्रमा का निर्माण करते? क्यों नहीं वे एक बनावटी सूर्य का निर्माण करते, जिससे कि आइसलैंड और ग्रीनलैंड के लोगों की उतनी अधिक ठंड से रक्षा की जा सके?

श्रीभगवान् कभी शून्य नहीं होते

श्रील प्रभुपाद—भगवान् चैतन्य महाप्रभु ने एक बार एक **रत्न-चिंतन मणि** का उदाहरण दिया कि वह अनेक अन्य रत्नों को बनाता है, किंतु स्वयं वैसा ही बना रहता है।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

[श्रीईशोपनिषद् आवाहन]

इस श्लोक का अर्थ यह है कि यद्यपि प्रत्येक वस्तु श्रीभगवान् के भीतर से ही उत्पन्न होती है, किंतु वह कभी घटती नहीं। पृथ्वी पर पेट्रोल समाप्त होता जा रहा है और यह एक विकट समस्या बनती जा रही है, किंतु सूर्य अब भी चमक रहा है और अगणित वर्षों तक चमकता रहेगा और श्रीकृष्ण लाखों सूर्यों का निर्माण कर सकते हैं, वस्तुतः पहले से ही उन्होंने वैसा कर भी दिया है। किंतु वे पूर्णतः सक्षम हैं। उनका कुछ भी नष्ट नहीं हुआ है। वही श्रीभगवान् हैं। और वही अचिन्त्य शक्ति उनकी उच्चतम शक्ति है।

आज हमारे पास खर्च करने के लिए कुछ धन है, किंतु दूसरे ही दिन हमारा कोष शून्य हो जाता है। दुष्ट कहते हैं कि अंतिम सत्य शून्य है, शून्यवाद। वे नहीं जानते कि श्रीभगवान् कभी शून्य नहीं होते—वे सदैव अस्तित्वमान हैं। अतः हमें श्रीभगवान् के संबंध में स्पष्ट विचार रखना चाहिए कि वे इन विचारों को वेदों में वर्णित सामग्री से ग्रहण करें, और

मूर्खों एवं दुष्टों के बहकावे में न आएं। वैदिक साहित्य में श्रीभगवान् और उनकी सारी शक्तियों को समझाया गया है। हमारी शक्ति समाप्त हो गई है, किंतु श्रीभगवान् की नहीं। यही श्रीभगवान् और हमारे बीच अंतर है। मैं तेज गति से चल नहीं सकता, अनेक अन्य कार्य नहीं कर सकता हूं जो एक नवयुवक कर सकता है, क्योंकि मैंने अपनी युवा शक्ति खो दी है। किंतु श्रीभगवान् सदैव युवा हैं। **अद्वैतम् अच्युतम् अनादिम् अनंत-रूपम् आद्यं पुराण-पुरुषं नव-यौवनं च**, भगवान् "श्रीकृष्ण पूर्ण हैं, कभी च्युत न होने वाले और अनादि हैं। अगणित रूपों में विद्यमान वे आदि पुरुष हैं, पुरातन हैं, सनातन हैं और सदा नवयुवक की भांति ताजे दिखलाई पड़ते हैं। [ब्रह्मसंहिता ५.३३]

श्रीकृष्ण भगवद्‌गीता में भी कहते हैं—**ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।** "श्रीभगवान् प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में निवास करते हैं।" वे प्रत्येक अणु में भी विद्यमान हैं। परंतु इतने पर भी वे एक हैं। अर्थात् श्रीभगवान् और वे अद्वैत हैं, द्वैत रहित। ऐसा नहीं है कि वे आपके हृदय के अंतर्गत हैं और एक दूसरा व्यक्तित्व मेरे हृदय में विद्यमान है। नहीं, वे दोनों एक हैं। परमात्मा प्रत्येक स्थान पर अपने सर्वव्यापी रूप में विराजमान है और वह अन्तर्यामी भी है, तिस पर भी वह एक है।

श्रीकृष्ण के प्रेम की परम प्रकृति

डॉ० सिह—श्रील प्रभुपादजी, पश्चिमी देशों के किसी ईश्वरपरक साहित्य में वे कहते हैं कि श्रीभगवान् "प्रेम" हैं।

श्रील प्रभुपाद—भगवान् सब कुछ हैं। वे ऐसा क्यों कहते हैं कि श्रीभगवान् यह हैं और वह हैं? कोई भी वस्तु श्रीभगवान् है, क्योंकि वे परमसत्ता हैं। उनका प्रेम और उनकी शत्रुता एक ही है। भौतिक जगत् में हम प्रेम और बैर में अंतर देखते हैं। परंतु श्रीभगवान् का प्रेम और उनकी शत्रुता एक ही वस्तु है। इसलिए वे अचिंत्य अथवा कल्पनातीत कहे जाते हैं, गोपियों के प्रति श्रीकृष्ण के प्रेम तथा कंस के प्रति उनके बैर दोनों का फल एक ही

निकला। कंस और गोपियाँ दोनों वैकुंठ धाम में गए। पूतना श्रीकृष्ण को विष पिलाने आई थी और माता यशोदा सदैव नटखट बच्चे की रक्षा के हेतु आतुर रहतीं कि उन्हें किसी प्रकार कष्ट न पहुँचे। अस्तु माता यशोदा और पूतना विरोधी हैं, किंतु उन दोनों ने एक ही फल पाया। श्रीकृष्ण ने सोचा, "मैंने पूतना का दूध पिया है, अतएव अब वह मेरी माँ है उसको भी ठीक उसी गंतव्य स्थान पर पहुँचाना चाहिए जहाँ माता यशोदा।" यही श्रीकृष्ण के प्रेम और बैर की परम प्रकृति है।

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयम्।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते ॥

"विद्वान् तत्वविद् जो परम सत्य को पहचानते हैं, वे इस अद्वैत तत्त्व को ब्रह्म, परमात्मा अथवा श्रीभगवान् कहते हैं।" [श्रीमद्भागवत १.२.११] श्रीभगवान् के निराकार सर्वव्यापक लक्षणों से संपन्न स्वरूप को ब्रह्म कहा गया है और उनका अन्तर्यामी लक्षण परमात्मा है। उसी समय वे भगवान् हैं जो उनका मूल साकार दिव्य स्वरूप है। ये तीनों भिन्न-भिन्न, किंतु एक हैं। यही श्रीभगवान् की प्रकृति है, **अचिंत्य-भेदाभेद-तत्त्व**। एक साथ ही भिन्न तथा अभिन्न, जो व्यक्ति भगवान् की साकार अवधारणा तक पहुंच गया है, वह अपने आप ब्रह्म और परमात्मा तक पहुँच गया है। वे सब श्रीकृष्ण हैं, किंतु उनमें अंतर है। साथ-साथ वे एक हैं और भिन्न भी।

विद्वान् व्यक्ति से ज्ञान स्वीकारना

डॉ० सिंह—श्रील प्रभुपादजी, श्रीभगवान् को स्वीकर करने में अनेक लोगों को कठिनाई है।

श्रील प्रभुपाद—वे रुग्ण हैं, किंतु वे यह नहीं चाहते कि उनका उपचार किया जाए। यदि वे उपचार के हेतु सहमत नहीं होते, तो यह उनकी त्रुटि है। जो व्यक्ति श्रीकृष्णभावना—भगवान् की भावना—में लीन नहीं है वह पागल है। माया, अपराशक्ति—भौतिक शक्ति—के प्रभाव में वह केवल प्रेतग्र[illegible]क्ति

की भाँति मूर्खतापूर्ण बातें करता है। आप को अवश्य ही किसी विद्वान् के पास जाना चाहिए। आप निश्चय ही वैसा व्यक्ति ढूँढ़ लें, एक गुरु, और उसके सम्मुख आत्म समर्पण करें। फिर उनसे प्रश्न पूछें और जो कुछ उत्तर उनसे मिलता है उसे अवश्य ही स्वीकार करें। श्रीभगवान् को समझने की यही ठीक प्रक्रिया है। सर्वप्रथम आप गुरु की खोज करें, फिर अपनी सेवा तथा समर्पण से उन्हें संतुष्ट करें। गुरु जी सब कुछ समझाएँगे। श्रीकृष्ण भगवद्गीता (४.३४) में समझाते हैं—

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः॥

"सद्गुरु के शरणागत होकर डण्डवत् प्रणाम, विनम्र जिज्ञासा और निष्कपट भाव से उनकी सेवा करके उस तत्त्व को जान। वे तत्त्व को जानने वाले आत्मज्ञानी महापुरुष, तेरे लिए ज्ञान का उपदेश करेंगे।"

इस्कॉन की भक्त योजना

दुर्लभ मानव जीवन का सार्थक उपयोग करना प्रत्येक नर या नारी का आदर्श होना चाहिए। योजना में भाग लेने के लिए प्रत्येक व्यक्ति आमंत्रित है, यदि वह निम्नलिखित विधि-निषेधों का पालन करता है :



विधि :
श्रद्धापूर्वक अधोलिखित हरे कृष्ण महामंत्र का जप तुलसी की १०८ मनकों वाली माला से प्रतिदिन १६ माला करे तथा गुरु-महाराज के निर्देशन में भक्तिमार्ग के अन्य विधि-विधानों का पालन करें।

महामंत्र :
हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे।।

निषेध :

१. नशा निषेध :

चाय, कॉफी, तम्बाकू, गाँजा, भाँग, शराब एवं अन्य किसी प्रकार के नशीले द्रव्य का सेवन निषिद्ध।

२. अभक्ष्य भक्षण निषेध :

मांस, मछली, अण्डा एवं प्याज, लहसुन जैसी तामसिक वस्तुओं का सेवन निषिद्ध।

३. परस्त्री गमन निषेध :

विवाहित दाम्पत्य जीवन के अलावा अन्य सभी प्रकार के स्त्री/पुरुष का अवैध सम्पर्क निषिद्ध।

४. द्यूत निषेध :

किसी भी प्रकार का जुआ, सट्टा आदि का खेलना निषिद्ध है।

उपर्युक्त हरे कृष्ण महामंत्र सब का एकमात्र मंत्र है और श्रीमद्भगवद्गीता तथा श्रीमद्भागवत मूलभूत शास्त्र हैं।

हमारे केन्द्रों के भगवदुन्मुख पवित्र आध्यात्मिक वातावरण में इन भक्तों को प्रशिक्षित किया जायगा तथा योग्य भक्तों को भारत के वैदिक संदेश कृष्णभक्ति के प्रचारार्थ विदेशों में भी भेजे जाने की सम्भावना है।

विशेष विवरण के लिए इस्कॉन के किसी भी निकटस्थ केन्द्र से सम्पर्क करें अथवा भग नु-दर्शन (भ.यो.वि.), भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, हरे कृष्ण धाम, जुहू, बम्बई—४०० ०४९ से पत्र-व्य करें।

इस पुस्तक की विषयवस्तु के जिज्ञासु पाठकगण अपने निकटस्थ किसी भी इस्कॉन केन्द्र के सचिव से पत्र-व्यवहार करने के लिए आमन्त्रित किए जाते हैं :

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ (ISKCON)

संस्थापक आचार्य : कृष्णकृपाश्रीमूर्ति श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

1. अगरतला, त्रिपुरा–हरे कृष्ण धाम, आसाम-अगरतला रोड, मारुस कार्यालय, बनमालीपुर, 799001
2. अहमदाबाद, गुजरात–पो. आ. ओढव, जि. ओढव, व्यापारी महामंडल इंडस्ट्रीयल एस्टेट के सामने, 382410/886382
3. अहमदाबाद, गुजरात–7, कैलाश सोसाइटी, मूक-बधिर स्कूल के सामने, आश्रम रोड, 380009/449935, 449945
4. इम्फाल, मणिपुर–हरे कृष्ण धाम, एयरपोर्ट रोड, 795001/21587
5. कलकत्ता, प. बंगाल–3, अलबर्ट रोड, 700017/443757, 446075, 434265
6. कोयम्बटूर–पो. आ. बा. 1188, आर.एस. पुरम्
7. गौहाटी, आसाम–श्री श्री रुक्मिणी-कृष्ण मंदिर, माउंट हरे कृष्ण, उलूबारी चराली, 781001 (पोस्ट बैग नं. 127)
8. चंडीगढ़, पंजाब–हरे कृष्ण धाम, दक्षिण मार्ग, सेक्टर 36-बी, 160036/44634, 44592
9. चामोर्शी, महाराष्ट्र–78, कृष्णनगर धाम, जिला : गढ़चिरोली, 442603
10. छायपरिया (हरिदासपुर), प. बंगाल–ठाकुर हरिदास श्रीपतबारी सेवाश्रम, थाना : बनगाँव, जिला : चौबीस परगना
11. तिरुपति, आ. प्र.–37, बी टाइप, टी. टी. डी. क्वार्टर्स, विनायक नगर, के. टी. रोड, 517501/2285
12. त्रिवेन्द्रम, केरल–टी. सी. 24/1485, डब्ल्यू. एण्ड सी. हॉस्पिटल रोड, थाइकाउड (Thycaud) 695014/68197
13. सिलीगुड़ी, प. बं.–पो. आ. गितालपाड़ा, जिला : जलपाईगुड़ी, 734401/26619
14. नागपुर, महाराष्ट्र–70, हिल रोड, रामनगर, 440010/33513
15. नयी दिल्ली–एम-119, ग्रेटर कैलाश-1, 110048/6412058, 6419701
16. पंढरपुर, महाराष्ट्र–हरे कृष्ण आश्रम, चन्द्रभागा नदी के पार, जिला : सोलापुर, 413304
17. पटना, बिहार–राजेन्द्र नगर, रोड नं. 12, (बहादुरपुर गोमती के समीप), 800016/50689.
18. पुना, महाराष्ट्र–4, तारापुर रोड, कैम्प, (लेडीज क्लब के सामने) 411001/660124
19. बंगलोर, कर्नाटक–हरे कृष्ण हिल '1' आर ब्लॉक, राजाजी नगर, सेकेंड स्टेज, 560010/359856
20. बम्बई, महाराष्ट्र–हरे कृष्ण धाम, जुहू, 400049/6206860, 6200870
21. बड़ौदा, गुजरात–18, हरे कृष्ण धाम, सुजाता सोसाइटी, गोत्री रोड, 390015/326299
22. भक्तिवेदांत, गुजरात–इस्कॉन, हरे कृष्ण आश्रम, एन. एच. नं. 88, जिला : सुरेन्द्र नगर, (फोन 97)
23. भाईंदर (प.), महाराष्ट्र–101-103, बालचन्द शॉपिंग सेंटर, पहला माला, जिला : थाना, 401101/C/o 6982621
24. भुवनेश्वर, उड़ीसा–नेशनल हाइवे नं. 5, नयापाली, 751001/53125, 55617
25. मद्रास, तमिलनाडु–59, बर्किट रोड, टी. नगर, 600017/662285, 662286
26. मायापुर, प. बंगाल–श्री मायापुर चन्द्रोदय मंदिर, पो. आ. श्री मायापुर धाम, जिला : नदिया
27. मोइरांग, मणिपुर–नीगबन, इंगथोन, टिडिम रोड
28. राजकोट, गुजरात–32, अनन्त नगर, कलवाड़ रोड, 360003
29. वृन्दावन, उ. प्र.–कृष्ण-बलराम मन्दिर, भक्तिवेदान्त स्वामी मार्ग, रमण-रेती, मथुरा/82478
30. वल्लभ विद्यानगर, गुजरात–गणेश भुवन, पॉलिटेक्निक कालेज के सामने, 388120/30796
31. सिलचर, आसाम–हरे कृष्ण धाम, अम्बिका पट्टी, जिला : कछार, 788004
32. सूरत, गुजरात–श्री राधाकृष्णमंदिर, ओल्पाड रोड, जहाँगीरपुरा, 395005/84215
33. हरिद्वार, उ. प्र.–धनदेवी हाउस, सुक्रेन भवन के पास, हर-की-पौड़ी, हरिद्वार, पो. बैग नं. 14, 24940
34. हैदराबाद, आ. प्र.–हरे कृष्ण धाम, नामपाली स्टेशन रोड, 500001/551018, 552924

कृषि फार्म :

अहमदाबाद, गुजरात–नित्यानन्द सेवाश्रम, ओढव रोड, (चुंगी नाका के पास), ओढव, 886382

अहमदाबाद जिला, गुजरात–हरे कृष्ण फार्म, कटवड़ा (इस्कॉन अहमदाबाद से सम्पर्क करें)

हैदराबाद, आ. प्र.–पो. आ. डबिलपुर ग्राम, मेढचल तालुका, जिला : हैदराबाद, 501401

मायापुर, प. बंगाल–(श्री मायापुर मन्दिर से सम्पर्क स्थापित करें)

चामोर्शी, महाराष्ट्र–(चामोर्शी केन्द्र से सम्पर्क साधें)

रेस्तरां (भोजनालय) :

बम्बई–'न्यू गोविन्दा' (हरे कृष्ण धाम में)

वृन्दावन–कृष्ण-बलराम मन्दिर अन्तर्राष्ट्रीय अतिथि गृह

सूचना : आब्लिक (/) के पूर्व पिन कोड नम्बर है तथा आब्लिक (/) के बाद टेलीफोन नम्बर है (हैं)। उपर्युक्त भारतीय केन्द्रों के अतिरिक्त विदेशों में भी सैकड़ों केन्द्र एवं मन्दिर हैं, पूर्ण विवरण के लिए संपादक, भगवद्-दर्शन (हिन्दी) से पत्र-व्यवहार करें, अथवा निकटस्थ इस्कॉन केन्द्र से सम्पर्क साधें। अद्यतन अन्तर्राष्ट्रीय इस्कॉन-समाचार एवं सूचनाओं के लिए प्रतिमाह *भगवद्-दर्शन* पढ़ें।



